॥श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः॥

वर्ष ८ | श्रीगौराब्द ५२५, श्रीधर-हृषीकेश मास | संख्या ५-६

वि. सं. २०६८, श्रावण-भाद्र मास ; सन् २०११, १६ जुलाई-१२ सितम्बर

विषय-सूची

विरह-विशेषांक (संख्या-४)

श्रीनारायणगोस्वामि-दशकम्.................................... ४
श्रीपाद भक्तिवेदान्त माधव महाराज

विरह-संसारिक-आसक्तिसे मुक्त करनेवाला.................... ९
श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

श्रीगुरुके चरणोंमें [निवेदन]................................ १३

वैष्णवों द्वारा प्रदत्त पुष्पाञ्जली-२......................... १७

नित्यलीलाप्रविष्ट अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके स्मरणमें दो शब्द.......... १८
श्रीमद्भक्तिकमल पर्वत महाराज

पूज्यपाद महाराजजी-गुरुवर्गको प्रचुर आनन्द प्रदान करनेवाले.. २०
श्रीमद्भक्तिचकोर श्रौती महाराज

मधुररसको विशेष एवं अत्यन्त श्रेष्ठ रूपमें ग्रहण करनेवाले पूज्यपाद महाराजजी.................. २४
श्रीपाद भक्तिवैभव सागर महाराज

अत्यधिक स्नेहशील श्रीलमहाराजजीकी कुछेक स्मृतियाँ.. २९
श्रीपाद रङ्गनाथ दास ब्रह्मचारी (रङ्ग बाबा)

श्रद्धा-पुष्पाञ्जलि.. ३२
श्रीपाद शेषशायी दास ब्रह्मचारी

श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीके विश्वदूत-श्रील महाराजजी.... ३६
श्रीपाद भक्तिविदग्ध भागवत महाराज

व्रजके विख्यात सन्त एवं गणमान्यजनोंकी पुष्पाञ्जली... ४१

श्रीनारायण महाराजजी- सच्चे सद्गुरु.................. ४२
श्रीरमेश बाबा महाराज

नित्यलीलाप्रविष्ट अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके प्रति सुमन श्रद्धाञ्जली ४४
श्रीयमुना प्रसाद चतुर्वेदी

पूज्य श्रीनारायण महाराजजी-व्रजकी अद्भुत विभूति ... ४८
श्रीगोपेश्वरनाथ चतुर्वेदी

वाणी-वैशिष्ट्य-सम्पद्-२...................... ५२
[श्रील गुरुदेव और श्रील रूप गोस्वामी]

श्रील रूप गोस्वामीका वैशिष्ट्य.................................. ७८
श्रील रूप गोस्वामीका कुछ वैशिष्ट्य............................... ८४
श्रील रूप गोस्वामिपादकी तिरोभाव-तिथि...करनेके कुछेक मुख्य उद्देश्य.. ९३

श्रीब्रजमण्डल परिक्रमा-२०११ .... ९६

संस्थापक एवं नियामक

नित्यलीलाप्रविष्ट परमहंस ॐ विष्णुपाद
अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके

अनुगृहीत
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

प्रेरणा-स्रोत
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

सम्पादक—श्रीमाधवप्रिय दास ब्रह्मचारी,
श्रीअमलकृष्ण दास ब्रह्मचारी

प्रचार सम्पादक—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त वन महाराज,
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त सिद्धान्ती महाराज

प्रचार सह-सम्पादिका—श्रीयुता उमा देवी दासी,
श्रीयुता सुचित्रा देवी दासी

सहकारी सम्पादक संघ—
(१) डॉ. श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी, पी-एच. डी., डी. लिट्. (संघपति)
(२) डॉ. श्रीअच्युतलाल भट्ट, एम. ए., पी-एच. डी.
(३) त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज
(४) डॉ. (श्रीमती) मधु खण्डेलवाल, एम. ए., पी-एच. डी.
(५) श्रीपरमेश्वरी दास ब्रह्मचारी 'सेवानिकेतन'
(६) श्रीपुरन्दर दास ब्रह्मचारी 'सेवाविग्रह'

कार्याध्यक्ष—श्रीपाद प्रेमानन्द दास ब्रह्मचारी 'सेवारत्न'

कार्यकारी मण्डल—श्रीविजयकृष्ण दास ब्रह्मचारी, श्रीगौरराजदास ब्रह्मचारी, श्रीप्राणकृष्णदास ब्रह्मचारी, श्रीमदनमोहनदास ब्रह्मचारी, श्रीदामोदरदास ब्रह्मचारी, श्रीसञ्जय दास ब्रह्मचारी, श्रीजगदीशप्रसाद दासाधिकारी, भक्त सोनु

ले-आउट और डिजाइन—श्रीकृष्णकारुण्य दास ब्रह्मचारी, श्रीअनुपम दास

प्रकाशक—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
जवाहर हाट, मथुरा-२८१००१ (उ. प्र.)
दूरभाष : 08791273306

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टकी ओरसे
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज द्वारा
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरासे प्रकाशित।

Visit us at:
www.bhagavatpatrika.com
e-mail:
mathuramath@gmail.com,
vijaykrsnadas@gmail.com

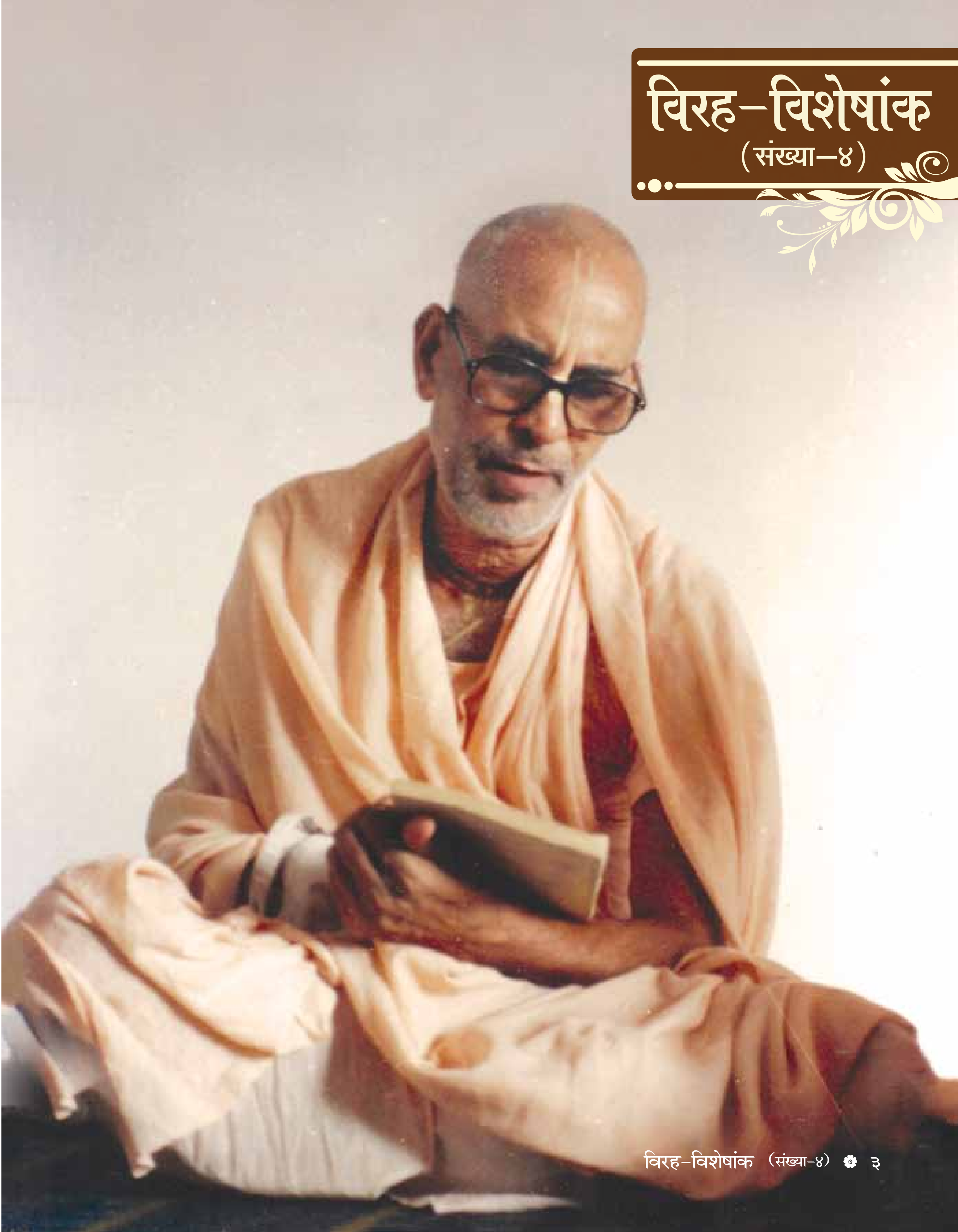

विरह–विशेषांक
(संख्या–४)

श्रीनारायणगोस्वामि-

श्रीपाद भक्तिवेदान्त माधव महाराज

©Śāradā dāsī

सद्भक्तसंराधितरागमार्ग–
प्रवर्तकं गौरजनं महान्तम्।
श्रीकेशवेष्टं वरदं वरेण्यं
नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥१॥

©Gokul dāsa

©Śāradā dāsī

©Gokul dāsa

कलियुगमें सत्भक्तजनोंके द्वारा संराधित या उपासित रागमार्गके प्रवर्तक, श्रीशचीनन्दन गौरहरिके निजजन, महानतम, श्रीकेशवदेव अथवा श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजी जिनके इष्टदेव हैं, उन वरदाता, वरेण्य, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥१॥

–दशकम्

संकीर्तितं गौरहरे वाणी
त्रिविक्रमे वामनाप्तसख्यम्।
श्रीमद्युगाचार्यपदेन युक्तं
नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥२॥

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादके द्वारा विशेष रूपमें कीर्तित गौरवाणीका देश–विदेशमें विस्तार करनेवाले, अपने सतीर्थ श्रील भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजजी एवं श्रील भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम गोस्वामी महाराजजीके प्रति सख्यभावसे युक्त, व्रजवासी विद्वद्जनों द्वारा प्रदत्त युगाचार्य पदवीसे विभूषित, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीको मैं प्रणाम करता हूँ॥२॥

श्रीगौरकृष्णैकप्रियं धरण्यां
प्रसारितं भक्तिविनोदधारम्।
विस्तारकं विश्वपते हार्द्यं
नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥३॥

युगपत् श्रीगौर तथा श्रीकृष्णके प्रेष्ठजन (प्रियजन), पृथ्वीपर श्रीभक्तिविनोद धाराको प्रवाहित एवं प्रचारित करनेवाले, श्रील विश्वनाथ चक्रवती ठाकुरके हृदयस्थित रसका विश्वमें विस्तार करनेवाले, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥३॥

सद्भक्तिनिर्धारणयुक्तिदक्षं सन्दर्शितं येन च मार्गमिष्टम्।
नरोत्तमाज्ञापितभक्तिदर्श्यं नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥४॥

सद्भक्ति–पथका निर्धारण करनेमें अत्यन्त दक्ष, अपने चरणाश्रित सेवकोंको इष्टमार्ग प्रदर्शित करनेवाले, श्रील नरोत्तम दास ठाकुर द्वारा सूचित भजनके आदर्श–स्वरूप, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥४॥

©Vasantī & Anitā dāsī

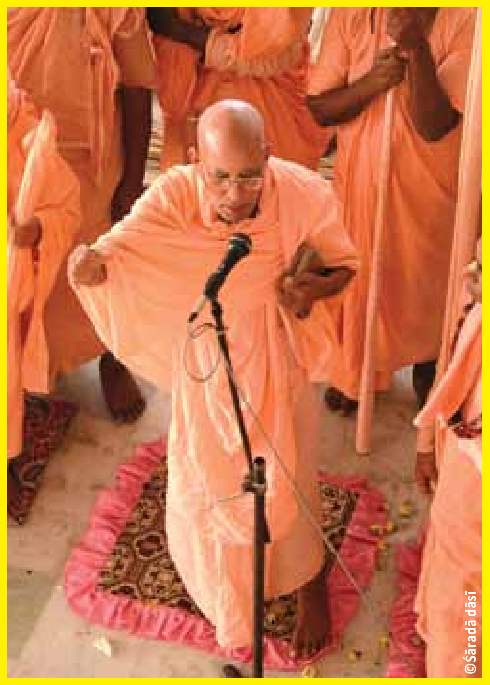

©Śaradā dāsī

अहर्निशं कृष्णकथासु युक्तं श्रुत्यर्थसारावहणं महिष्ठम्।
गौड़ीयवेदान्तरसं प्रदिष्टं नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥५॥

दिन–रात कृष्णकथादिके गानमें निमग्न रहनेवाले, श्रुतियोंके सारार्थको प्रदर्शित करनेवाले, महान महिमासे युक्त, वेदान्तके गौड़ीय–भाष्यरसका पान करानेवाले, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥५॥

©Śaradā dāsī

श्रीकृष्णनामामृतपानमुग्धं राधावने कृष्णवने वसन्तम्।
गंगातटे नित्यसमाधिलब्धं नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥६॥

श्रीकृष्णनामामृत पानमें मुग्ध, श्रीधाम नवद्वीप (राधावन) एवं श्रीधाम वृन्दावन (कृष्णवन) में वास करनेवाले, गंगातटपर नित्य समाधिमग्न, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥६॥

©Subala-sakhā dāsa

©Vasantī & Anitā dāsī

©Vasantī & Anitā dāsī

रूपादिगोस्वामिजनैककीर्ति–संस्थापकं रक्षणमिष्टचेष्टम्।
रसैकनिष्ठं स्वदने च विज्ञं नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥७॥

एकमात्र श्रीलरूप–सनातनादि गोस्वामियोंकी कीर्तिको जगतमें संस्थापित करनेवाले, अपने इष्ट अर्थात् श्रीगौड़ीय–सारस्वत परम्पराकी रक्षामें सर्वदा चेष्टा–परायण, भक्तिरसमें एकनिष्ठ तथा रसके नित्य आस्वादनमे विज्ञवर, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥७॥

नीलाभकारुण्यघनाक्षिशोभं सुहास्यभाष्यान्वितरम्यवक्त्रम्।
सुदीर्घहेमाभवपुर्यतीन्द्रं नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥८॥

जो घनीभूत करुणासे युक्त नील नेत्रोंसे सुशोभित हैं, जिनका मुखकमल मृदु–मन्दहास्य और मधुर वचनों द्वारा रमणीय है, सुदीर्घ स्वर्णवर्ण कलेवरसे युक्त, यतियोंमें श्रेष्ठ, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥८॥

©Subala-sakhā dāsa

श्रीपाल्यदास्येन च राधिकायाः
स्नेहेन चाद्येन विभावितान्तम्।
स्वसेवकैः सेवितपादपद्मं
नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥९॥

जो श्रीमती राधिकाके पाल्यदासी भाव एवं मधुस्नेह भावसे विभावित चित्तवाले हैं तथा जिनके चरणकमल निज सेवकों द्वारा सेवित हैं, उन जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥९॥

©Vasudeva Kṛṣṇa dāsa

©Vasantī & Anitā dāsī

स्निग्धं च शिष्ये निपुणं च शाष्ये
स्वराष्ट्रभाषानुदितं च शास्त्रम्।
गोस्वामिटीकार्थपरं प्रबन्धं
नारायणं विश्वगुरुं नमामि॥१०॥

अपने शिष्योंके प्रति युगपत् स्नेहशील एवं शासन करनेमें निपुण, राष्ट्रभाषा हिन्दीमें गोस्वामी–ग्रन्थोंका अनुवाद करनेवाले, गोस्वामियों द्वारा रचित टीकाओंके अनुसार प्रबन्धोंके रचयिता, जगद्गुरु श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥१०॥

©Kṛṣṇakarunya

स्तोत्रं पठेत् यो दशकं सुरम्यं
श्रद्धान्वितो भक्तिभरेण नित्यम्।
गुरोः पदे शुद्धरतिं च लब्ध्वा
तद्दास्यसौख्यं परमाप्नुयात्सः॥११॥

जो इस सुरम्य दशक–स्तोत्र (दशकम्) को श्रद्धापूर्वक भक्तिभावसे नित्य पाठ करेंगे, वे श्रील गुरुदेव—श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके चरणकमलोंमें शुद्ध रति लाभ करके उनके परम दास्य सुखको प्राप्त करेंगे॥११॥

विरह—संसारिक—आसक्तियोंसे मुक्त करनेवाला

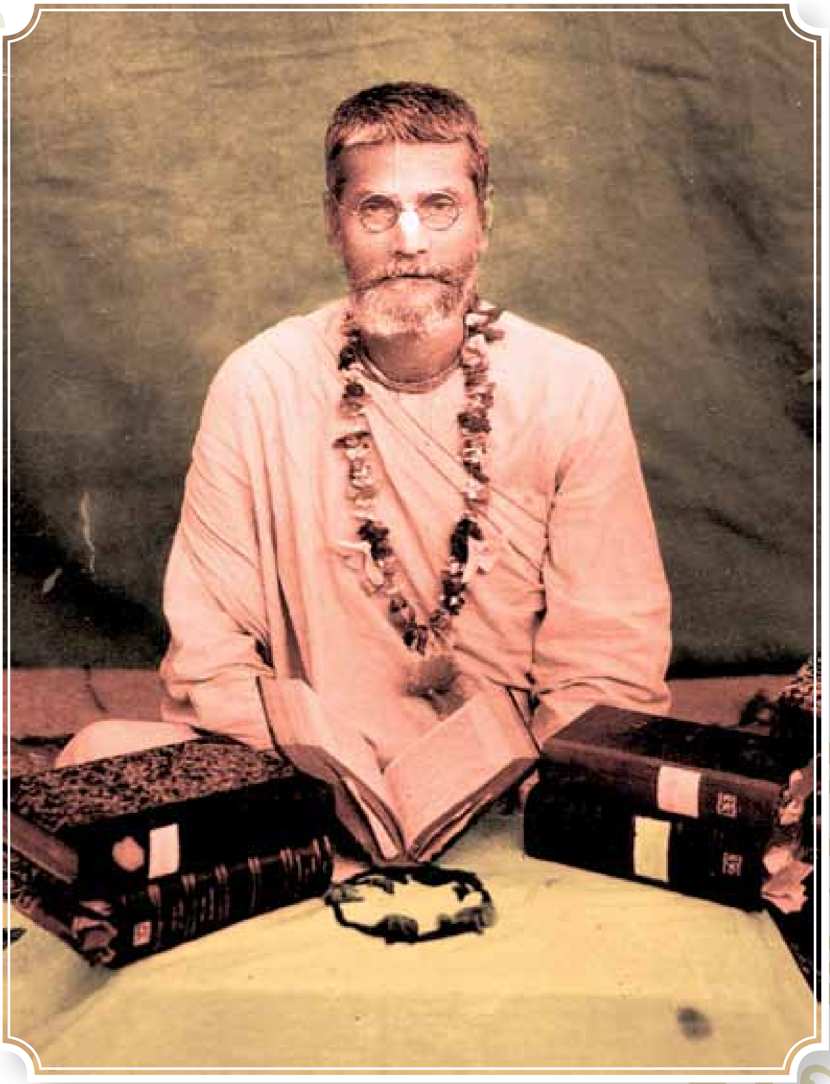

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

[श्रील भक्तिविनोद ठाकुरकी विरह–तिथि १७/७/१९५१, श्रीउद्धारण गौड़ीय मठ, चुँचुड़ामें प्रदत्त वक्तृताके कुछेक अंश]

महापुरुषोंकी जीवनी ही एक–एक धर्मशास्त्र ग्रन्थ हैं, क्योंकि साधु–शास्त्र एवं गुरुके वचनोंका अनुसरण करते हुए ही उनका जीवन यापन होता है।

शास्त्रोंमें अप्राकृत वाणीकी पुनः पुनः चर्चा करनेका निर्देश

हमलोग प्रति वर्ष ही श्रील ठाकुर भक्तिविनोदकी तिरोभाव–तिथिका पालन करते हैं एवं आप लोगोंको उसमें योगदान करनेके लिये आह्वान करते हैं। विरह–तिथि या तिरोभाव–तिथि किसे कहा जाता है, इसका तात्पर्य क्या है, तथा ऐसी तिथियोंका पालन क्यों किया जाता है—इन विषयोंको हम प्रत्येक वर्ष चर्चा करते हुए श्रवण किया करते हैं। इन सब कथाओंकी पुनरावृत्ति होनेपर भी वह कथाएँ पुरानी नहीं हो जातीं। शास्त्रोंमें अप्राकृत वाणीकी पुनः पुनः चर्चा करनेका ही निर्देश है—**"आवृत्तिरसकृदुपदेशात्"** (वेदान्त सूत्र ४/१/१) अर्थात् पुनःपुनः श्रवण–कीर्त्तनादिकी आवश्यकता है।

वैष्णवोंकी विरह–तिथिको पालन करनेका उद्देश्य

मिलनके अभावमें ही विरहकी उत्पत्ति होती है। साधारणतः विरहका अर्थ विच्छेद होता है। जगतकी एक वस्तुसे अन्य वस्तुको अलग कर देनेसे जो विच्छेद होता है, वह किन्तु 'विरह' नहीं है। यद्यपि उस विच्छेदको बहुत बार 'विरह' कहकर ही उल्लेख होते देखा जाता है, किन्तु इस जागतिक विरह या विच्छेदके फलस्वरूप हम शोक–मोह जैसे एक भावको ही लक्ष्य करते हैं। शोक–मोह हमें संसारमें आसक्त कर देता है, किन्तु विरह हमें संसारिक–आसक्तिसे मुक्ति प्रदान करके भगवान्‌की सेवामें निष्ठा प्रदान करता है। इसलिए हम वैष्णवोंकी विरह–तिथि पालन किया करते हैं। आप सभीके हृदयमें यही भाव जागृत हो—यही श्रील भक्तिविनोद ठाकुरके निकट प्रार्थना है।

विरहको जागृत करनेकी विधि

किसी वस्तुके विषयमें जिसका जितना ज्ञान होता है, उसमें उतना ही विरह जागृत होता है। वस्तुके ज्ञानका अभाव होनेपर विरह सम्भवपर ही नहीं है। जिसके विषयमें 'विरह', यहाँ उसीको ही 'वस्तु' कहा जा रहा है—ऐसा समझना चाहिए। अतः श्रील भक्तिविनोद ठाकुरके सम्बन्धमें हमें वास्तविक ज्ञान नहीं होनेपर हमारा उनके विषयमें विरह जागृत नहीं हो सकता। वस्तुका ज्ञान ही मिलन है, उस वस्तुके हृदयमें सम्मिलित नहीं होनेपर उस वस्तुसे विरह सम्भवपर ही नहीं है। जिससे कि हम श्रीलभक्तिविनोद ठाकुरके सम्बन्धमें वास्तविक ज्ञान प्राप्त कर पायें, इसलिए ही प्रत्येक वर्ष हम उनकी जीवनीकी चर्चा किया करते हैं।

शास्त्र और महाजनोंके वचनोंके वास्तविक–तात्पर्यकी उपलब्धिका उपाय

महापुरुषोंकी जीवनी ही एक–एक धर्मशास्त्र ग्रन्थ हैं, क्योंकि साधु–शास्त्र एवं गुरुके वचनोंका अनुसरण करते हुए ही उनका जीवन यापन होता है। इसीलिये महापुरुषोंकी अत्यधिक पवित्र–चरितावलीकी चर्चाके द्वारा ही शास्त्र और महाजनोंके वचनोंके वास्तविक तात्पर्यकी उपलब्धि होती है एवं इसके द्वारा ही हमारा कल्याण अवश्यम्भावी है। किन्तु ऐसा विचारकर जागतिक ज्ञान या इन्द्रियोंसे उत्पन्न ज्ञानको केन्द्र करके भगवत् या भागवत्–तत्त्वकी चर्चा करनेपर उस वस्तुका तत्त्व मायिक तथा दोषयुक्त हो जायेगा। "**अप्राकृत वस्तु नहे प्राकृत गोचर** अर्थात् अप्राकृत वस्तु प्राकृत इन्द्रियोंके गोचर नहीं है।" इसलिये भजनविज्ञ–तत्त्वदर्शीजनोंका आनुगत्य छोड़कर वेद–वेदान्त, धर्मशास्त्रादि और महापुरुषोंकी जीवनीकी चर्चा करनेपर इन सब शास्त्र–ग्रन्थोंके तात्पर्यको हृदयङ्गम नहीं किया जा सकता एवं इसी कारणसे अनेक लोग विपथगामी हुए हैं–इसके दृष्टान्तका भी अभाव नहीं है।

आनुगत्य–हीनता ही वास्तविक–तत्त्वसे अवगत न होनेका कारण

माननीय राजेन बाबूके द्वारा लिखित ''शङ्कर और रामानुज चरित्र'' नामक ग्रन्थको उनका वास्तविक जीवनीके रूपमें स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसका कारण है कि राजेन बाबूने केवल आनुगत्यहीन जड़ीय विद्या–बुद्धिका ही बहुमानन किया है–आचार्य श्रीरामानुज और श्रीशङ्करके तत्त्वसे भलीभाँति अवगत न होकर एवं निरपेक्ष विचारका अवलम्बन न करके केवल विद्वेषके कारण ही वह ग्रन्थ लिखा है। संक्षेपमें मेरा वक्तव्य यह है कि शङ्कर ही शङ्कर और रामानुज ही रामानुज हैं।

वैकुण्ठ–विचार

सिद्ध–वैकुण्ठ–पुरुषोंके स्वरूपका एक परिचय होता है। उनका ''मञ्जरी'' इत्यादि परिचय मायिक स्त्री–पुरुषोंकी

धारणासे अतीत है। भजनकी अपरिपक्व अवस्थामें इस प्रकारका दिखावा करनेपर पतन अवश्यम्भावी है। प्राकृत–वस्तु और वैकुण्ठ–वस्तु क्रमशः अन्धकार और प्रकाशके समान सम्पूर्णतः विपरीत हैं। वैकुण्ठ–विचारमें एक ही देहमें पुरुष और स्त्री–भाव युगपत सत्य है। एक ही श्रील रूप गोस्वामीने कृष्णलीलामें स्त्री और गौरलीलामें पुरुष रूपमें अवस्थान किया है। श्रील ठाकुरका बाह्य पुरुष–वेश लक्ष्य करनेपर भी, स्वरूपतः उनका स्त्री वेश है। अतः वैकुण्ठ–तत्त्व, मायिक–तत्त्वसे सम्पूर्णतः विलक्षण है।

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर आज भी हमारे बीच वर्त्तमान

हम सभी श्रील ठाकुरकी तिरोभाव–तिथिका सम्मान करनेके लिये ही यहाँपर एकत्रित हुए हैं। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे वर्त्तमान समयमें इस प्रपञ्चमें अवस्थित नहीं हैं और इसलिए उनके अभावमें यहाँ किसी स्मरण–सभाका आयोजन किया गया है। "**वैष्णवेर गुणगान, करिले जीवेर त्राण** अर्थात् वैष्णवोंका गुणगान करनेसे जीवोंका भवसागरसे त्राण (उद्धार) होता है"–यह बात सत्य है, तथा साथमें यह भी सत्य है कि "**अद्यापिह सेइ लीला करे गौराराय** अर्थात्

आलेख्यरूपी मूर्ति ही वही अप्राकृत श्रीमूर्ति है। जड़विद्या–बुद्धिका बलपूर्वक आश्रय लेनेसे श्रीविग्रहका चिन्मय और नित्य होना कभी भी अनुभवका विषय नहीं हो सकता।

अभी भी श्रीगौरराय अपनी उन लीलाओंको करते हैं।" अतः मेरा वक्तव्य यह है कि श्रील ठाकुर भी आज हमारे बीच वर्तमान हैं। हमने यहाँ उनके सुसज्जित आलेख्य (चित्रपट) को 'अर्च्चा' के रूपमें दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त किया है। वे हमारी इन्द्रियोंसे उत्पन्न धारणाके अन्तर्गत [आनेवाले] कोई चित्रपट मात्र नहीं हैं—वे स्वयं ठाकुर श्रील भक्तिविनोद हैं। उन्होंने स्वरचित विभिन्न ग्रन्थोंमें हमें बतलाया है—श्रीविग्रह स्वयं वही तत्त्ववस्तु हैं। अतः उनके वचन या 'शब्द–प्रमाण' के आधारपर ही मैंने कहा है—यह आलेख्यरूपी मूर्ति ही वही अप्राकृत श्रीमूर्ति है। जड़विद्या–बुद्धिका बलपूर्वक आश्रय लेनेसे श्रीविग्रहका चिन्मय और नित्य होना कभी भी अनुभवका विषय नहीं हो सकता।

श्रील भक्तिविनोद ठाकुरकी मूर्ति उनकी नित्य देहसे अभिन्न

श्रीविग्रह या भगवद्तत्त्व—मायावादी या इन्द्रियोंके बलपर ज्ञान संग्रह करनेवालोंकी कल्पनासे अतीत वस्तु है। श्रीविग्रह–तत्त्वकी आलोचनामें साक्षीगोपालका प्रसङ्ग ही हमारे लिये श्रेष्ठ उदाहरण है। अप्राकृत श्रीमूर्त्तिके प्रति हमलोग प्राकृत बुद्धि न करें, इसलिए स्वयं भगवान्ने ही अपने भक्त 'छोटे–विप्र' के माध्यमसे अपने तत्त्वको बोला है—''**प्रतिमा हञा कह केने वाणी** अर्थात् प्रतिमा होकर भी आप किस प्रकार बोल रहे हैं?" "**प्रतिमा नहे तुमि साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन** अर्थात् आप प्रतिमा नहीं साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन हैं।" (चै० च० मध्य ५/९५–९६) अतः पौत्तलिकता और श्रीविग्रहतत्त्व कभी भी एक नहीं हैं। श्रील रामानुजाचार्यने अपने प्रकटकालमें ही अपने एकान्त विश्रम्भ–सेवकके अनुरोधपर उसे जो अपनी श्रीमूर्त्ति अर्पण की थी, बादमें वह श्रीमूर्त्ति ही उस शिष्यके साथ आलाप–चर्चाके द्वारा उसके सब प्रकारके प्रश्नोंका समाधान और संशयोंका छेदन कर देती थी। यहाँ देखा जाता है कि वह श्रीमूर्त्ति रामानुजाचार्यसे किसी प्रकारसे भी भिन्न नहीं थी। श्रीनवद्वीप–मण्डलके स्वरूप–गञ्जमें स्थित ''स्वानन्द सुखद–कुञ्जमें'' श्रील ठाकुर भक्तिविनोदकी जो मूर्त्ति प्रतिष्ठित है, वह श्रीमूर्ति उनकी नित्य देह और उनसे अभिन्न है। वैष्णवगण किसी अनित्य ध्वंसशील वस्तुकी पूजा नहीं करते। अतः श्रील ठाकुरका जो श्रीविग्रह श्रीमन्दिरमें प्रतिष्ठित होकर पूजित हो रहा है, वह साधकोंको पुरुष–देह रूपमें दिखलायी देनेपर भी, सिद्धगणोंके लिए वे श्रीविग्रह स्त्री–देहमें ''कमल मञ्जरी'' हैं। अतएव श्रीभक्तिविनोद और कमल–मञ्जरी एक ही वस्तु हैं।

महापुरुषोंकी वास्तविक जीवनीका दिग्दर्शन

महापुरुषोंके बाह्य क्रिया–कलापों अथवा उनकी जीवनीकी चर्चा करनेमात्रसे ही उनका वास्तविक परिचय प्राप्त नहीं होता। महापुरुषोंका वास्तविक दर्शन प्राप्त करनेके लिये उनके स्वरूपका परिचय जानना आवश्यक है। अतः आज हम श्रीठाकुरकी जीवनीकी चर्चा करते समय उनकी कौनसी जीवनीकी चर्चा करें, यह विचारणीय विषय हुआ है। श्रील ठाकुरने अपने सिद्ध–परिचयमें अपने नाम, धाम, सेवा और क्रिया–कलापके विषयमें हमें जो बतलाया है, एक प्रकारसे वही उनकी वास्तविक जीवनी है। क्या आज यही हमारी चर्चाका विषय नहीं होगा? दूसरी ओर उनकी जो जीवनी है, वह आपलोगोंके निकट निवेदन कर चुका हूँ एवं आपलोगोंने भी उसे श्रवण किया है। वर्तमान समयमें उनकी उसी (साधकोचित) जीवनीके प्रति लक्ष्य करके उनकी दोनों जीवनियाँ ही हमारा आदर्श हों।

(श्रीगौड़ीय पत्रिका वर्ष—३, संख्या—७ से अनुवादित)

श्रीगुरुके चरणोंमें [निवेदन]

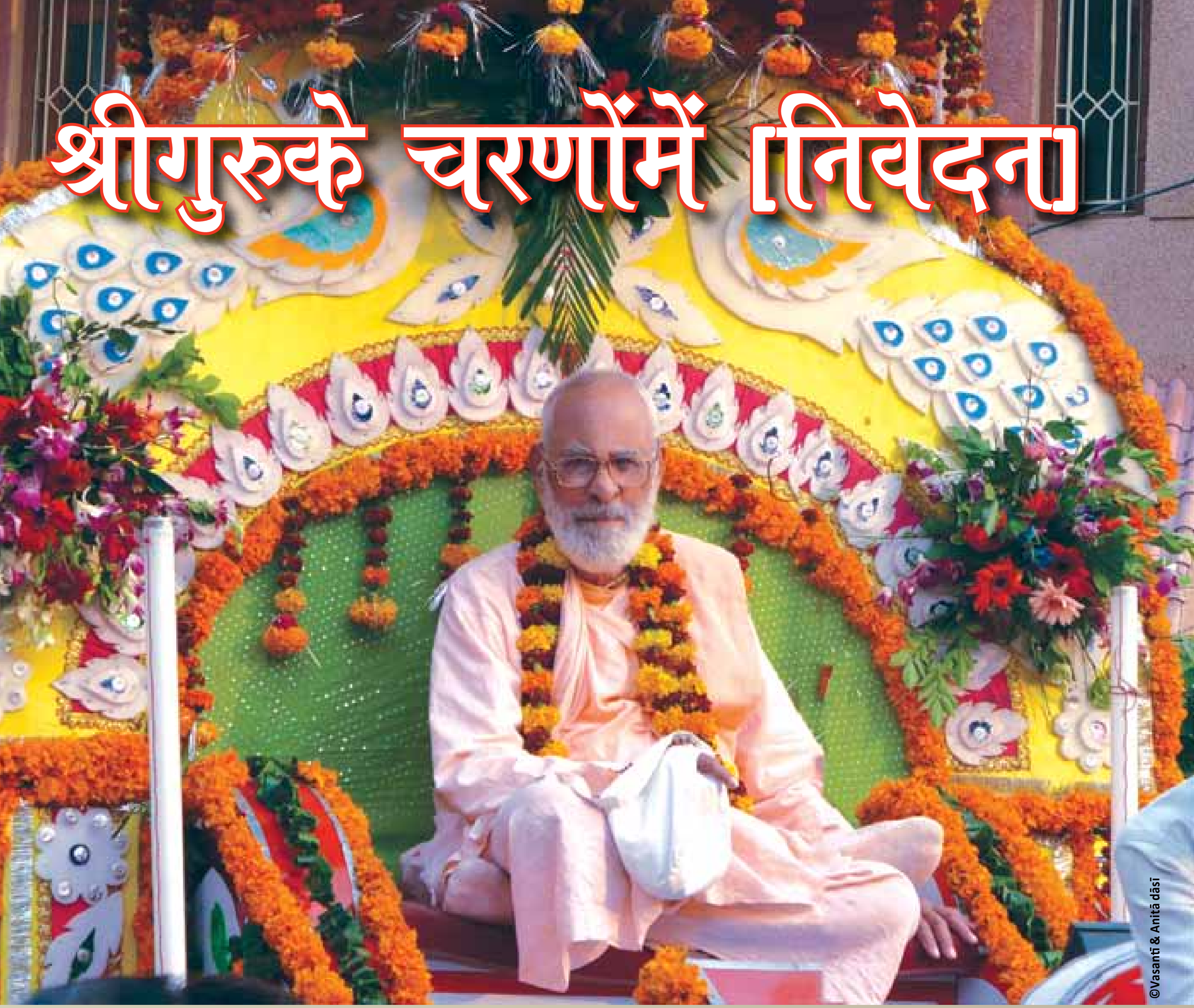

©Vasantī & Anitā dāsī

(कबे) रुद्ध हृदय–कपाट खुलिया।
(ताहे) तोमार आसन पातिब॥१॥

[पदकर्त्ता अपने श्रीगुरुदेवके चरणकमलोंमें प्रार्थना करते हुए कह रहे हैं कि हे गुरुदेव!] कब ऐसा दिन आयेगा जब मैं अपने हृदयके बन्द कपाटको खोलकर वहाँ आपके लिए आसन बिछाऊँगा॥१॥

(कबे) संसारसुख–वासना भुलिया।
(गुरो) तोमार–सेवासुखे मातिब॥२॥

हे गुरुदेव! कब मैं संसारसुखकी वासनाको भूलकर आपके सेवासुखमें मत्त हो जाऊँगा॥२॥

(कबे) जड़ आकांक्षासमूह फेलिया।
(नाथ) अप्राकृत आशा पोषिब॥३॥

(कबे) ऐ श्रीचरणे आमारे फेलिया।
(प्रभो) तव यश विश्वे घोषिब॥४॥

हे नाथ! कब मैं अपनी समस्त जड़ आकांक्षाओंका त्यागकर, अप्राकृत आशाका पोषण करते हुए आपके

श्रीचरणोंमें स्वयंको समर्पितकर सम्पूर्ण विश्वमें आपके यशका गुणगान करूँगा ॥३–४ ॥

(कबे) निज कर्त्तृत्वाभिमान त्यजिया।
(तव) दास बलि' निजे जानिब॥५॥

(कबे) तव चरणयुगल भजिया
(मम) जीवन सार्थक मानिब॥६॥

कब मैं अपने कर्त्तृत्वाभिमानको छोड़कर स्वयंको आपका दास जानूँगा एवं आपके श्रीचरणोंका भजन करते हुए अपने जीवनको सार्थक समझूँगा ॥५–६ ॥

(कबे) भोक्तार सज्जा समूले छाड़िया।
(नाथ!) तब यशोनाम जपिब॥७॥

हे नाथ! कब ऐसा दिन आयेगा जब मैं भोक्ता होनेके अभिमानको सम्पूर्णरूपमें त्यागकर आपके नामयशका जप करूँगा ॥७ ॥

(कबे) विषय ह'ते मनटि काड़िया।
(प्रभो) तोमार चरणे सँपिब॥८॥

(कबे) हेमकामिनी–लोभ तेयागिया।
(निज) प्रतिष्ठा आर ना मागिब॥९॥

हे प्रभो! कब मैं अपने मनको विषयोंसे हटाकर उसे आपके चरणोंमें समर्पित करूँगा एवं कब कनक–कामिनीके लोभका त्याग कर दूँगा तथा अपनी प्रतिष्ठाकी भी इच्छा नहीं करूँगा ॥८–९ ॥

(कबे) माया–पिशाची–कवले न गिया।
(आमि) मोहनिद्रा ह'ते जागिब॥१०॥

कब मैं माया–पिशाचीके मुखमें न जाकर मोह–मायारूपी निद्रासे जागूँगा ॥१० ॥

(कबे) प्राकृतबुद्धये तोमा न देखिया।
(प्रभो) तोमाते असुया छाड़िब॥११॥

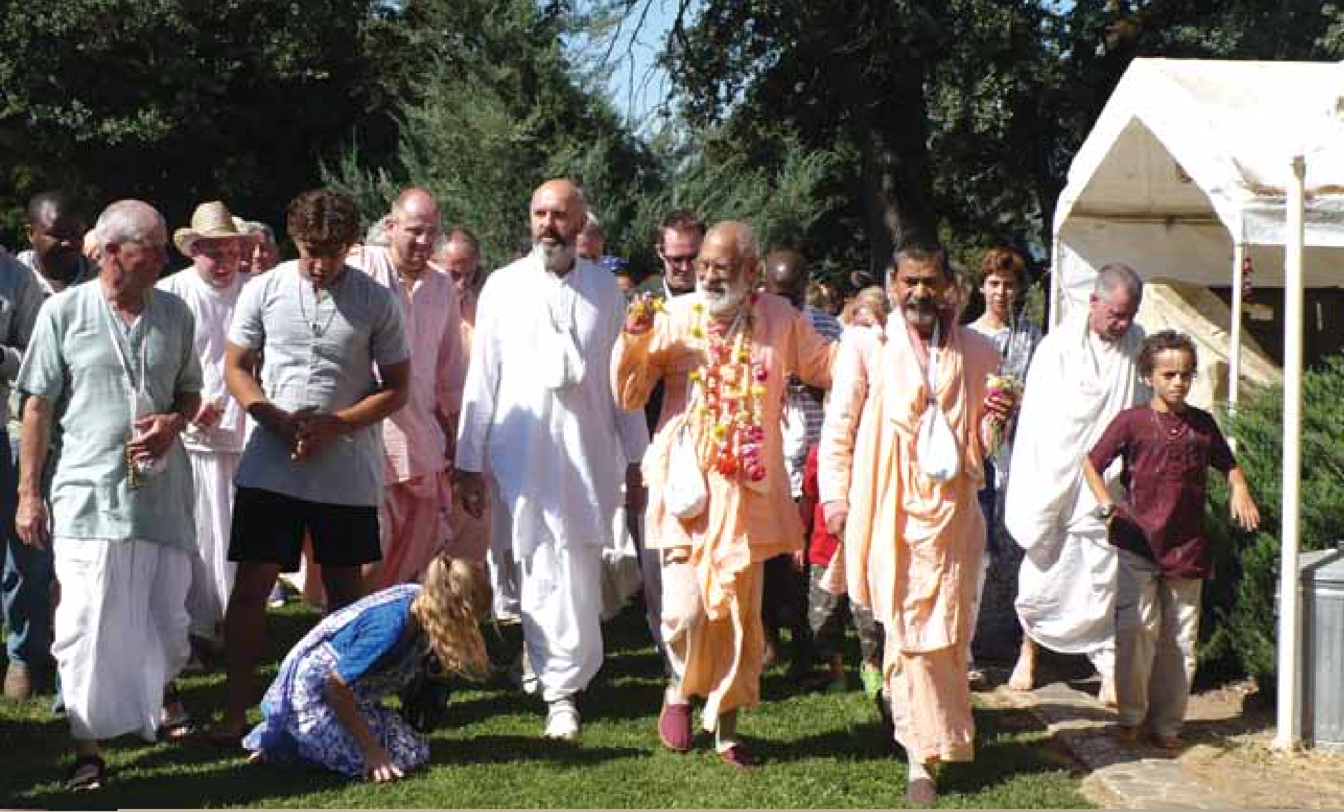

(कबे) तव करम–कलाप देखिया।
(तोमा) मर्त्यबुद्धि नाहि करिब॥१२॥

हे प्रभो! कब मेरा ऐसा सौभाग्य उदित होगा जब मैं आपको प्राकृत बुद्धिसे न देखकर आपके प्रति असूया (ईर्ष्या) भावका त्याग कर दूँगा एवं आपके क्रिया–कलापोंको देखकर आपके प्रति मर्त्यबुद्धि नहीं करूँगा॥११–१२॥

(कबे) शरणापत्ति चरणे लभिया।
(सब) संसार–यातना नाशिब॥१३॥

(कबे) तोमार नफर–वेशेते शोभिया।
(परा) निवृत्ति–सागरे भासिब॥१४॥

कब मैं आपके चरणोंमें शरणागति प्राप्तकर अपनी समस्त संसार–यातनाका नाश कर दूँगा एवं आपके दासके वेशमें सुशोभित होकर परा–निवृति(भक्ति)के सागरमें निमग्न हो जाऊँगा॥१३–१४॥

(कबे) देहात्मबुद्धि सम्पूर्ण त्यजिया।
(देह) आवरणमात्र बुझिब॥१५॥

(कबे) देह–स्वजन–मोहे ना मजिया।
(नित्य) निजजन भक्त खुजिब॥१६॥

कब मैं देहात्मबुद्धिका सम्पूर्ण रूपमें त्यागकर इस देहको आत्माका आवरणमात्र समझूँगा एवं इस देह और देहसे सम्बन्धित स्वजनोंके मोहमें न पड़कर अपने नित्य निजजन अर्थात् भक्तोंका अनुसन्धान करूँगा॥१५–१६॥

(कबे) असाधु–सङ्ग दूरे उत्सर्जिया
(भक्त) साधुसङ्ग रत हइब॥१७॥

(कबे) लोकव्यवहार सकल वर्जिया।
(तव) सेवक–शरण लइब॥१८॥

कब मैं असाधुसङ्गको दूरसे ही त्यागकर भक्त–साधुसङ्गमें रत हो जाऊँगा एवं समस्त

लोक–व्यवहारको छोड़कर आपके सेवकोंकी शरण लूँगा ॥१७–१८॥

(कबे) तोमार निर्देशे प्रबुद्ध हइया।
(पूत) माधुकरी–वृत्ति साधिब॥१९॥

(कबे) तोमार घरे कुकुर रहिया।
(सदा) निर्मल आनन्दे काँदिब॥२०॥

कब मैं आपके निर्देशसे प्रेरित होकर पवित्र माधुकरी–वृत्तिके द्वारा अपना जीवन यापन करते हुए आपके घरका कुत्ता बनकर सदैव निर्मल आनन्दमें क्रन्दन करूँगा॥१९–२०॥

(कबे) सेवाधिकार याइबे बाड़िया।
(जड़) आलस्य दूरेते त्यजिब॥२१॥

(कबे) भोग–वासना एकान्त छाड़िया।
(सदा) हरेकृष्णराम भजिब॥२२॥

कब मेरा सेवाधिकार वर्द्धित होगा और मैं जड़ आलस्यको दूरसे ही त्याग दूँगा एवं भोगवासनाका सम्पूर्णरूपमें त्यागकर सदा हरेकृष्ण, हरेराम आदि भगवान्‌के पवित्र नामोंका भजन करूँगा॥२१–२२॥

(कबे) साधुपदेश श्रवण–करिया।
(हेय) ग्राम्यवार्त्ता–चर्चा छाड़िब॥२३॥

(कबे) श्रुतविषय कीर्त्तन–करिया।
(क्रमे) श्रद्धा–भक्ति–प्रेम बाड़िब॥२४॥

कब मैं साधु–उपदेश श्रवण करके हेय ग्राम्यवार्त्ता–चर्चाको छोड़कर आपके द्वारा श्रवण कराये गए विषयोंका कीर्त्तन करके क्रमानुसार श्रद्धा, भक्ति, प्रेमका वर्द्धन करूँगा॥२३–२४॥

(कबे) गौरनिताई चरण भजिया।
(मम) जन्म सार्थक करिब॥२५॥

(कबे) श्रीराधाकृष्ण–प्रणय मजिया।
(नित्य) वृन्दावन–धामे चलिब॥२६॥

कब मेरा ऐसा दिन आयेगा जब मैं गौर–निताईके चरणोंका भजन करते हुए अपने जीवनको सार्थक करूँगा एवं श्रीराधाकृष्णके प्रणयरसमें निमग्न होकर नित्य श्रीवृन्दावन–धाम की ओर अग्रसर होऊँगा॥२५–२६॥

(साप्ताहिक गौड़ीय वर्ष–१, संख्या–३८ से अनुवादित)

वैष्णवों द्वारा प्रदत्त पुष्पाञ्जली–२

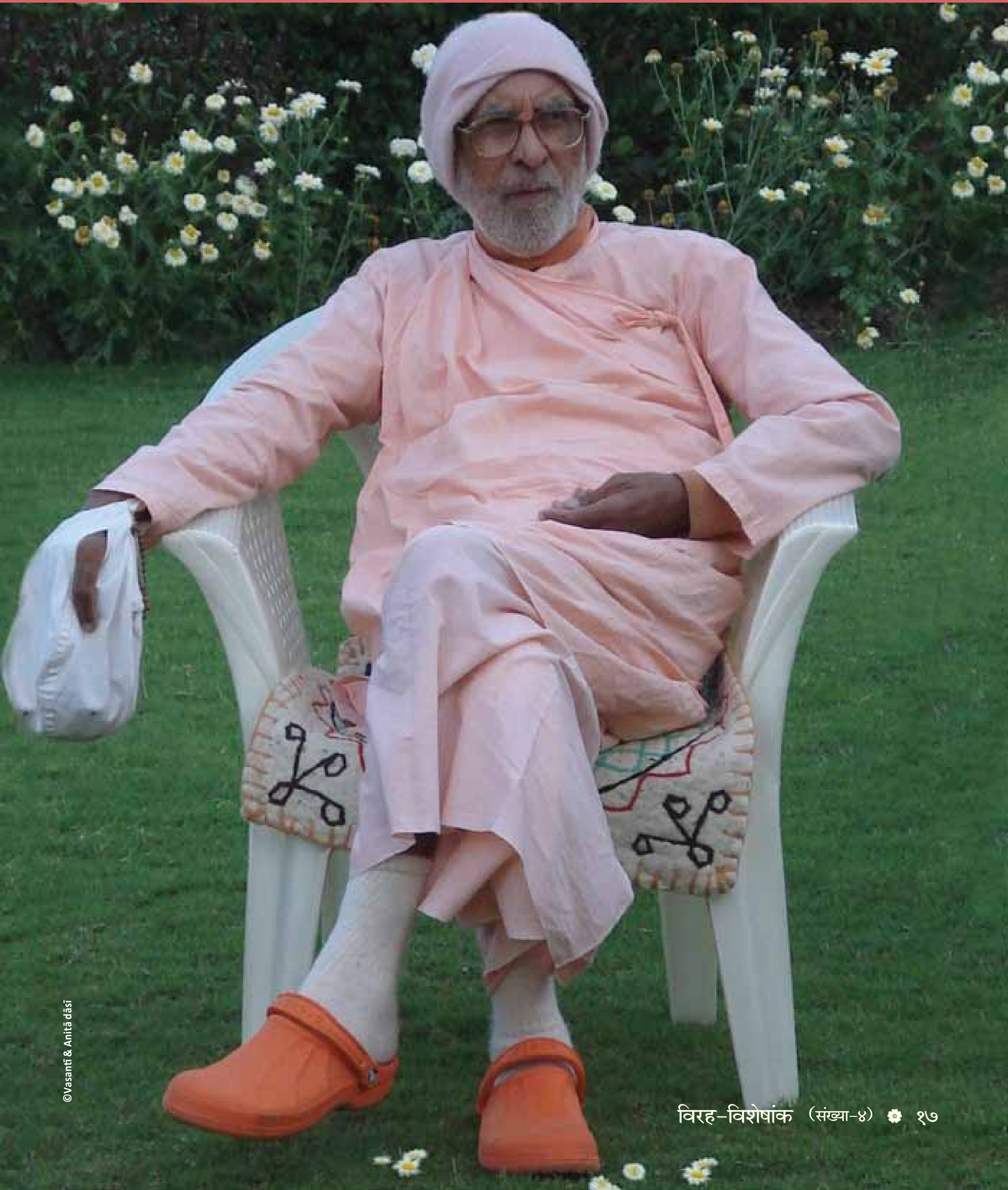

©Vasantī & Anitā dāsī

नित्यलीलाप्रविष्ट अष्टोत्तरशतश्री गोस्वामी महाराजके स्मरणमें

©Vasantī & Anitā dāsī

अतुलनीय कीर्तिमान स्थापित करनेवाले पूज्यपाद महाराजजी

भारत तथा विदेशोंमें श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायके विशेष वैष्णव–सन्त श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीने विश्वमें श्रीसनातन गौड़ीय–सम्प्रदायकी महिमा एवं श्रीश्रीगौर–नित्यानन्दकी अप्राकृत–लीलाओंका प्रचार करके विश्वमें एक अतुलनीय कीर्तिमान स्थापित किया है।

मेरे श्रीगुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराज १९३७ ई॰ में अपने गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादकी आज्ञासे लन्दन आदि विदेशोंमें श्रीगौर–वाणीके प्रचारके लिए गए थे और कुछ समय तक लन्दनमें अप्राकृत श्रीगौर–वाणी का प्रचार करके उन्होंने एक आलोड़न कर दिखलाया था। तदुपरान्त श्रील प्रभुपादके अप्रकटका संवाद प्राप्त कर श्रील गुरुदेव तुरन्त भारत लौट आये थे।

उसके बाद कुछ अन्य गौड़ीय वैष्णव–सन्त भी विदेशोंमें प्रचार करनेके लिए गए जिनमें प्रमुख हैं श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी। यद्यपि श्रील स्वामी महाराजने विश्वमें विपुलरूपसे श्रीगौर–वाणीका प्रचार किया, परन्तु उनके शिष्यवृन्द श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायके विचार–आचारको केवल अपने अधिकारानुसार ही अपना पाये।

पूज्यपाद महाराजका प्रचार–अविस्मरणीय

इसी कड़ीमें पूज्यपाद भक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीने जिस प्रकार गौड़ीय–सम्प्रदायके प्रचारको विश्वके सभी देशोंमें आँधीकी तरह फैलाया, वह अविस्मरणीय है।

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण

दो शब्द

—श्रीमद्भक्तिकमल पर्वत महाराज

अविस्मरणीय इसलिये कहा क्योंकि उन्होंने प्रचारके साथ–साथ गौड़ीय–आचारका प्रभाव भी सर्वत्र छोड़ा है। इसी आचार–प्रचारके फलस्वरूप विदेशोंसे उनके साथ बहुत–बहुत शिष्य आये और उनके मठोंमें सेवामें संलग्न हो गए।

पूज्यपाद महाराजजीसे मेरा सम्बन्ध

पूज्यपाद नारायण महाराजजीके साथ मेरा परिचय बहुत पुराना है। मेरे गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराजने जब मुझे श्रीइन्द्रप्रस्थ गौड़ीय मठ, मल्कागंज, दिल्लीका निर्माण आदि सेवाभार सौंपा था, उस समय मैंने गुरुदेवकी कृपासे सम्पूर्ण मठ निर्माणकर श्रीमूर्ति प्रतिष्ठा उत्सवके उपलक्ष्यमें श्रीइन्द्रप्रस्थ गौड़ीय मठमें चार दिन की धर्मसभाओंका आयोजन किया था। इस सेवाके लिए मैंने मथुरामें स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठसे श्रीपाद नारायण महाराजजीको दिल्ली लाकर श्रीइन्द्रप्रस्थ मठमें ठहराया और उन्हींके निर्देशानुसार ये सभी उत्सव और धर्म सभादि आयोजन सेवाएँ सम्पन्न की।

पूज्यपाद महाराजजीका स्नेह–वात्सल्य अकल्पनीय

पूज्यपाद नारायण महाराजने मुझे अपना छोटा भाई मानकर मुझे जो स्नेह–वात्सल्य और प्रीति दी है वह अकल्पनीय है। जब भी मैं दिल्लीसे मथुरा उनसे मिलने जाता तो वह अपना सारा कार्य छोड़कर मेरा आदर–सत्कार और मुझसे प्रीति करते थे और मुझे अपने साथ बिठाकर प्रसाद सेवा कराते। मठकी सेवा, पुस्तक–पत्रिका आदिका प्रकाशन, प्रचार करनेका उत्साह देकर वे सर्वदा मुझे भक्तिराज्यमें अग्रसर करते थे।

उनके निःस्वार्थ भावको समझना और समझाना बहुत कठिन है। मैं सदैव उनके स्नेह और प्रीतिको स्मरण करता रहूँगा और प्रार्थना करूँगा कि वे नित्यधामसे मुझे अपना आशीर्वाद देते रहें।

[श्रीमद्भक्तिकमल पर्वत महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराजजीके शिष्य हैं। इन्होंने बहुत समय तक अपने गुरुदेवके निर्देश अनुसार दिल्लीमें प्रचार–सेवा की और वर्तमानमें मथुरामें रहकर भजन कर रहे हैं।]

पूज्यपाद गुरुवर्गको

पूज्यपाद महाराज—सेवकोंके सेवाके उत्साहको वर्धित करनेवाले

पूज्यपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज किस प्रकारके निर्लिप्त और निस्वार्थ वैष्णव थे, यह सोचकर नेत्रोंमें आँसू भर आते हैं। उन्हें श्रीश्रीराधागोविन्दकी नित्य—लीलामें गए हुए आज प्रायः ८—९ मास हो गए हैं, किन्तु उनकी स्मृति अब भी भूल नहीं पा रहा हूँ। मेरे प्रति उनका स्नेह दो—चार वर्षका नहीं है। आजसे लगभग पचास वर्षसे अधिक हुए हैं कि जब मेरे परमाराध्य गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रील भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराजने दिल्लीमें श्रीइन्द्रप्रस्थ गौड़ीय मठ स्थापित किया था। उस मठके स्थापन—उत्सवके समय पूज्यपाद भक्तिवेदान्त नारायण महाराजने भी आमन्त्रित होकर योगदान दिया था। उनके साथ श्रीपाद शेषशायी ब्रह्मचारी आदि अन्य वैष्णवगण भी आये थे। तब मुझे मठमें रहते हुए पाँच वर्ष हो गये थे। श्रीश्रीगुरुगौराङ्गकी कृपासे मुझमें सेवा करनेका बहुत उत्साह था। उस उत्सवमें श्रीधाम वृन्दावनसे बहुतसे

महाराजजी—
प्रचुर आनन्द प्रदान करनेवाले

—श्रीमद्भक्तिचकोर श्रौती महाराज

प्राचीन वैष्णव भी आये थे। उन लोगोंके प्रसादकी व्यवस्था करनेका दायित्व मेरे ऊपर था। पूज्यपाद श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजने मेरे सेवा करनेके उत्साह एवं सेवामें व्यस्तताको देखकर अपने साथ आये हुए ब्रह्मचारियोंको मेरी सहायता करनेके लिए नियुक्त कर दिया। हम दोनों (शेषशायी प्रभु और मैं) एक ही आयुके थे। एक ही आयुके बान्धवका साथ मिलनेसे मेरा सेवा करनेका उत्साह और भी अधिक बढ़ गया। चार दिनका उत्सव अत्यन्त आनन्दसे बीता।

गुरुवर्गको प्रचुर आनन्दित करनेवाले

उत्सवके उपलक्ष्यमें हुई धर्मसभामें पूज्यपाद नारायण महाराजकी वक्तृता सुनकर मेरे गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराज, श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज एवं श्रीमद्भक्तिसौरभ सार महाराज प्रचुर आनन्दित हुए थे। पूज्यपाद नारायण महाराज हिन्दीभाषी होनेपर भी बीच–बीचमें बंगला एवं अंग्रेजी बहुत अच्छी तरह बोलते थे। उस दिनसे ही पूज्यपाद नारायण गोस्वामी महाराजके प्रति मेरी स्वाभाविक भक्ति हो गयी। जब–जब उनसे भेंट होती, तब वे मुझे भजनके लिए उपदेश देते थे।

आचार और प्रचार—दोनों कार्योंमें परम निपुण

एक ओर जिस प्रकार पूज्यपाद नारायण महाराज योग्य प्रचारक थे, उसी प्रकार दूसरी ओर वे भजनानन्दी भी थे। श्रील सनातन गोस्वामीने नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुरको कहा है (चै॰ च॰ अन्त्य ४/१०३)—"**आचार प्रचार नामे करह दुई कार्य। तुमि सर्वगुरु तुमि जगतेर आर्य॥** अर्थात् तुम नाम–भजनका आचरण और नाम प्रचार—दोनों कार्य करते हो, इस प्रकार तुम सर्वश्रेष्ठ भक्त होनेके कारण सबके गुरु हो।"

वैष्णवोचित आचरणसे सुशोभित

पूज्यपाद नारायण महाराजजीके श्रीगुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके साथ मेरे गुरुदेवका जिस प्रकार प्रीतिपूर्वक आदान–प्रदान होता था, पूज्यपाद नारायण महाराजने भी मेरे साथ वैसी ही प्रीतिका प्रदर्शन किया है। नन्दग्राम स्थित श्रीगोस्वामी भजन कुटीर (नन्दाश्रम) में श्रीगौड़ीय–संघके तत्कालीन आचार्य श्रीमद्भक्तिसुहृद अकिञ्चन महाराजके कृपानिर्देश अनुसार एक मन्दिरका निर्माण किया गया। उस मन्दिरके द्वारोद्घाटनके लिए मेरे द्वारा पूज्यपाद नारायण गोस्वामी महाराजजीसे प्रार्थना करनेपर उन्होंने एक बातमें ही उसे स्वीकार कर लिया। वर्ष १९९३ ई० में ६ अप्रैलको श्रीश्रीबलदेव प्रभुकी रास–पूर्णिमा तिथिको पूज्यपाद नारायण महाराज स्वयं अपने पैसेसे बस किरायेपर लेकर अपने आश्रित और अनुगतजनोंके साथ नन्दग्राम आये थे और उन्होंने इस उद्घाटन उत्सवको सुन्दर रूपसे सम्पन्न किया था। उस उत्सवके अन्तमें मैंने पूज्यपाद महाराजको कुछ प्रणामी देनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उन्होंने उसे किसी प्रकार भी ग्रहण नहीं किया।

पूज्यपाद महाराजजीके उपदेशके अनुसार श्रीगिरिधारी जिऊकी सेवाका सौभाग्य

नन्दग्राममें श्रीगोस्वामी भजन कुटीरके निर्माण होनेके पहलेसे ही मेरे नन्दग्राममें रहनेके कारण पूज्यपाद महाराज मेरे प्रति हार्दिक संतुष्ट थे। पूज्यपाद नारायण महाराजजीने भी एक समय गोर्वधनमें जहाँ अभी श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ है, उस भूमिके मालिकके एक कमरेमें रहकर भजन किया था। इसीलिए व्रजमें इस प्रकार नन्दग्राममें रहनेकी मेरी रुचिको देखकर वे मुझे उत्साह दिया करते एवं प्रशंसा किया करते थे। उन्हींके उपदेशके अनुसार मैं बहुत वर्षोंसे नन्दाश्रम (नन्दग्राम) में श्रीश्रीगिरिधारी जिऊकी सेवा करता आ रहा हूँ।

नन्दग्राममें पावन–सरोवरके तटपर पूज्यपाद महाराजके सान्निध्यकी प्राप्ति

पूज्यपाद नारायण महाराजजी जब अपनी परिक्रमा पार्टीको लेकर व्रजमण्डल परिक्रमा करते हुए नन्दग्राममें आते थे, तब पावन सरोवरके निकट श्रीसनातन गोस्वामीके भजन कुटीरके दर्शन करनेके उपरान्त अवश्य ही नन्दाश्रममें कुछ समय बैठकर श्रीश्रीगुरुगौराङ्गकी

कथाका कीर्तन करते थे। परवर्त्ती कालमें अस्वस्थतावशतः जब वे परिक्रमामें नहीं आ पाते थे, तब उनके निर्देशसे उनके ही अनुगत भक्त नन्दाश्रममें बैठकर कथा–कीर्तन किया करते।

पूज्यपाद महाराजजीका अन्तिम आशीर्वाद

गत वर्ष उनकी अस्वस्थताका संवाद मिलनेपर मैं गोवर्धनमें श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठमें गया था। सेवक लोगोंने सूचित किया कि पूज्यपाद महाराजजीको बात करना मना है। मुझे पूज्यपाद महाराजजीके निकट जाने नहीं देनेपर दूरसे ही खिड़कीकी ओर इङ्गित करके उन्हें मेरे आनेकी सूचना दी गयी 'नन्दग्रामसे श्रौती महाराज आये हैं।' इस बातको सुनकर पूज्यपाद महाराजजीने कुछ उन्मीलित (खुले हुए) नेत्रोंसे मेरी ओर देखकर जैसे मुझे अन्तिम आशीर्वाद दिया। दुर्भाग्यवशतः उनके अप्रकट–कालमें मेरा शरीर अचल होनेके कारण मैं उनके किसी भी विरह–अनुष्ठानमें प्रस्तुत नहीं हो पाया।

श्रीमन्महाप्रभु और श्रीश्रीराधागोविन्दकी सेवाका सर्वत्र प्रकाश

श्रील महाराजजीने वृद्ध अवस्थामें भी प्रचुर उत्साहके साथ देश–विदेशमें श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीका प्रचार किया है। कुछ सालमें ही श्रीवृन्दावनमें श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, नवद्वीपमें श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, एवं इसके अतिरिक्त भी देश–विदेशमें बहुत स्थानोंपर प्रचार केन्द्र और मन्दिर और श्रीगोस्वामियोंके बहुतसे ग्रन्थोंका हिन्दी एवं अंग्रेजीमें अनुवाद करके उन्हें प्रकाशित किया है। इस प्रकारसे उन्होंने श्रीमन्महाप्रभु और श्रीश्रीराधागोविन्दकी सेवाको प्रकाश करके जगत जीवोंका बहुत कल्याण विधान किया है।

महाराजजीके चरणकमलोंमें प्रार्थना

"**अप्राकृत वस्तु नहे प्राकृत गोचर** अर्थात् अप्राकृत वस्तु प्राकृत इन्द्रियोंके गोचर नहीं होती", "वैष्णव चिनिते नारे देवेर शकति अर्थात् देवता भी वैष्णवोंको पहचान नहीं सकते", "**मुइ केमने चिनिब अधम अल्प मति** अर्थात् मैं अधम अल्प मति किस प्रकारसे वैष्णवोंको पहचानकर उनकी महिमाका यथार्थ वर्णन कर सकता हूँ।"

वे नित्य–लीलासे मुझे आकर्षित करें–इसी प्रार्थना सहित मैं अपनी पुष्पाञ्जलीको विराम देता हूँ।

वञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः॥

[श्रीमद्भक्तिचकोर श्रौती महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित शिष्य हैं और अनेक वर्षोंसे नन्दग्राममें पावन सरोवरके निकट श्रीगोस्वामी भजन कुटीरमें रहकर भजन परायण हैं।]

मधुररसको विशेष एवं रूपमें ग्रहण करनेवाले

[१/१/२०११ को श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, नवद्वीपमें आयोजित विरह–सभामें प्रदत्त वक्तृताके कुछ अंश]

अत्यन्त श्रेष्ठ पूज्यपाद महाराजजी

—श्रीपाद भक्तिवैभव सागर महाराज

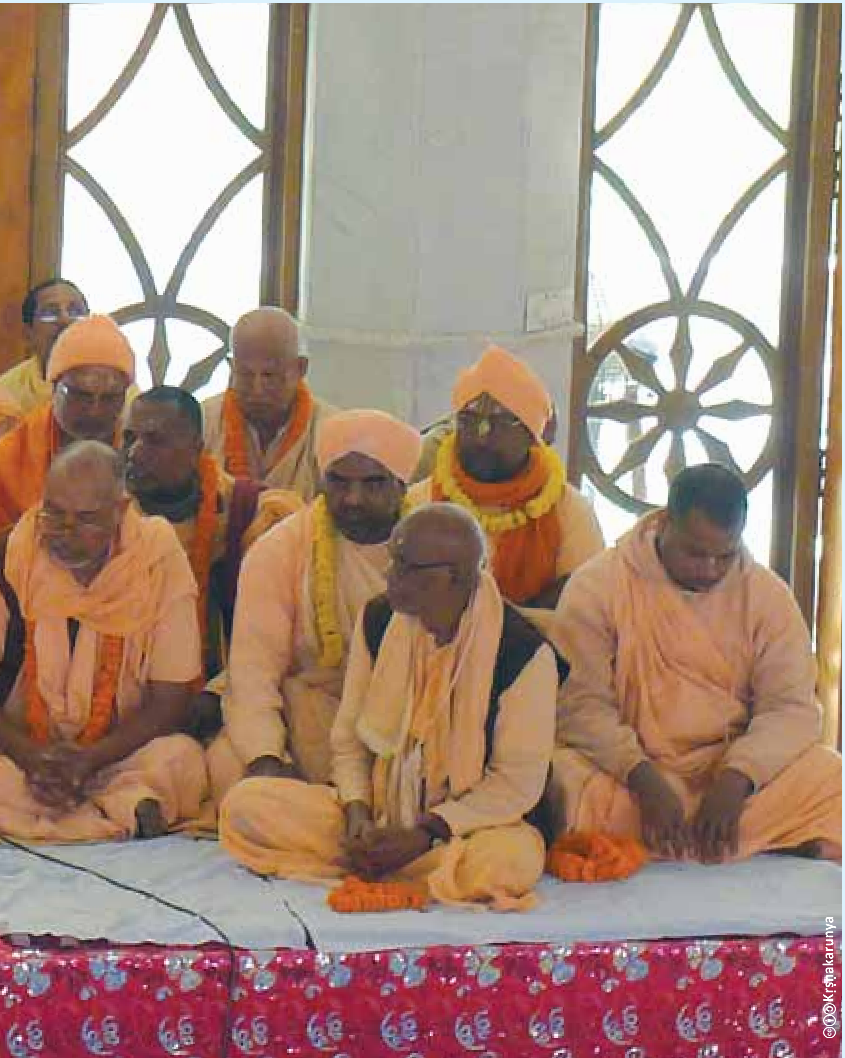

मङ्गलाचरण

परम करुणामय, मदीश्वर नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिविलास तीर्थ गोस्वामी गुरु महाराजके श्रीचरणोंकी वन्दना करते हुए परमाराध्यतम परमगुरुदेव जगद्गुरु नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादके चरणकमलोंमें प्रणत होकर उनके कृपा—आशीर्वादकी प्रार्थना करता हूँ। मैं अपने शिक्षागुरु श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके चरणोंमें प्रणत होता हूँ। वे कृपापूर्वक मेरे प्रति प्रसन्न हों। उपस्थित त्रिदण्डिपादगण, वैष्णवमण्डली, मातृमण्डली, सज्जनवृन्द आप सभी इस कङ्गालकी दण्डवत् प्रणति स्वीकार करें।

मर्त्यलीलाको त्यागकर राधाकुण्डमें उपस्थित होना

आजके दिन पूज्यपाद श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी तिरोभाव–तिथिके उपलक्ष्यमें स्मरण (विरह) सभा हो रही है। आजसे चार दिन पूर्व शुक्ल–नवमी तिथिमें श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज इस मर्त्यलीलाको त्यागकर अपने कोटि प्राणोंसे प्रिय आराध्यदेवता गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजी एवं उनके प्राणप्रिय गुरुदेव श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर अर्थात् नयनमणी मञ्जरीके साथ मिलकर राधाकुण्डमें वृषभानुनन्दिनीकी प्रेम–सेवामें अनुकूलता विधान करनेके लिए वहाँ पर उपस्थित हुए हैं। गौड़ीय–वैष्णवोंके लिए मञ्जरी–पद ही श्रेष्ठ एवं प्रेष्ठ पद है।

श्रीवृषभानुनन्दिनीकी प्रेम–सेवामें निमग्न

यदि हम रूपानुग–धाराके वैशिष्ट्यका विचार करें, तो पूज्यपाद भक्तिवेदान्त नारायण महाराज जहाँसे आये थे, जिन वृषभानुनन्दिनीके आदेशको प्राप्तकर उन्होंने जगतके मङ्गलका कार्य किया, विश्वमें सर्वत्र भगवान्‌की कथाका प्रचार किया, अब पुनः अपने गुरुदेवके साथ मिलित होकर वहीं (राधाकुण्डपर) उन्हीं श्रीवृषभानुनन्दिनीकी प्रेमसेवामें निमग्न हो गये हैं।

श्रील प्रभुपादके आन्तरिक विचारोंको अत्यन्त श्रेष्ठ रूपमें ग्रहण करनेवाले

पूज्यपाद श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराजकी सेवा, उनकी भजन–पद्धति एवं उनकी हरिकथामें मधुररसकी बात ही अधिक प्रकाश होती और उसे ही उन्होंने जीवनमें

विशेष—रूपसे एवं अत्यन्त श्रेष्ठ रूपमें ग्रहण किया है। जगद्गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर प्रभुपादने अपनी मर्त्यलीला त्यागनेसे दो दिन पहले कहा था—**"प्रत्याशां मे त्वं कुरु गोवर्धन पूर्णम्॥"** (श्रीरूपगोस्वामीकृत श्रीगोवर्धनाष्टक) अर्थात् हे गोवर्धन मेरी प्रत्याशा पूर्ण करो। क्या प्रत्याशा? **"निजनिकट निवासं देहि गोवर्धन त्वम्॥"** (श्रीरघुनाथ गोस्वामीकृत श्रीगोवर्धनवासप्रार्थनादशकम्) अर्थात् हे गोवर्धन! मुझे अपने निकटमें निवासस्थान दो। गोवर्धनमें वास अर्थात् राधाकुण्डके तटपर वास। अतएव राधाकुण्ड ही गौड़ीयजनोंके जीवनका आश्रय है।

वास्तविक सम्भोग और विप्रलम्भ

आज विरह—उत्सव है। 'विप्रलम्भ' शब्दका अर्थ है—अन्तरमें प्राप्त करना। किन्तु 'सम्भोग' होता है—बाहरमें प्राप्त करना। अथवा, जिनकी बाहरमें सेवा करते हैं, उन्हें अन्तरमें—अन्तरस्थल (हृदय) में प्रतिष्ठित करनेके लिए तीव्रप्रयास ही वास्तविक 'सम्भोग' है। किन्तु जिन्हें अन्तरके अन्तरस्थलमें बिठाया हुआ है, उन्हें बाहर प्रकाशित करके उनकी सेवा करनेका प्रयास ही वास्तविक 'विप्रलम्भ' है।

विरहकी उपलब्धि कैसे सम्भवपर?

श्रीगुरु—वैष्णवोंके विरहको हम किस प्रकार उपलब्धि कर सकते हैं? जिन्होंने जितने परिमाणमें जड़ीय मानसिक भावनाका विसर्जनकर सर्वतोभावसे complete surrender करके श्रीगुरु—वैष्णवोंकी सेवामें आत्मनियोग किया है, उन्हें उतने परिमाणमें ही उनके विरहकी उपलब्धि हो सकेगी।

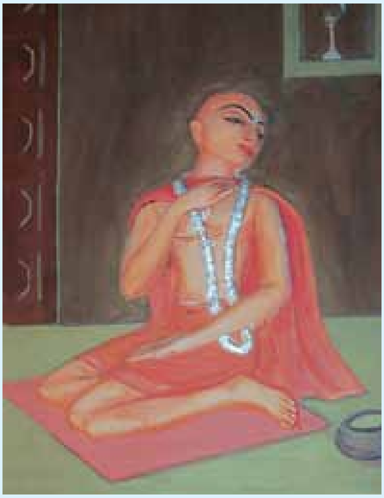

अन्तिम लक्ष्य

हमारे वैष्णव—शास्त्र भी विरहके ही शास्त्र हैं। श्रीचैतन्यचरितामृत पढें, वहाँ देख सकते हैं कि अपनी अन्तिम लीलामें श्रीमन्महाप्रभुने हमें जो spiritual guidance या शिक्षा दी है, उसके अनुसार गम्भीरामें श्रीमन्महाप्रभुने जो निर्जनतम विरह आस्वादन किया—वही हमारे लिये महाप्रभुकी शिक्षाका सार है, वही हमारा पथ है और वही हमारा अन्तिम लक्ष्य है। किन्तु उस लक्ष्य तक पहुँचनेके लिये सर्वप्रथम गुरु—वैष्णवोंके प्रति हमारे हृदयमें उसी प्रकारका तीव्रतम विरह उदित होना चाहिए, अन्यथा वहाँ तक पहुँचना असम्भव है।

भक्त—प्रवर वृत्रासुरकी प्रार्थनामें विरहका इङ्गित

एक बात स्मरण आती है। जब इन्द्रके साथ वृत्रासुरका युद्ध चल रहा था, उस युद्धक्षेत्रमें रहकर भी वृत्रासुरने निष्कपट, निर्व्यलीक (सरल) चित्तसे इन्द्रको कहा—इन्द्र! आजके युद्धमें तुम्हारी जय होगी और मेरी मृत्यु होगी। मैं मनमें जो सोच रहा हूँ क्या तुम उसे जानते हो? मैं अनुमान करता हूँ कि तुम्हारे ऊपर भगवानकी कृपा होगी, किन्तु करुणा नहीं होगी। इन्द्रने पूछा कि ऐसा क्यों? मेरे प्रति यदि कृपा होती है, तो करुणा किसके प्रति होगी? वृत्रासुरने कहा जो 'अकिञ्चन गोचर' अर्थात् जाञ्च अकिञ्चन हैं,

जिनकी बाहरमें सेवा करते हैं, उन्हें अन्तरमें—अन्तरस्थल (हृदय) में प्रतिष्ठित करनेके लिए तीव्रप्रयास ही वास्तविक 'सम्भोग' है। किन्तु जिन्हें अन्तरके अन्तरस्थलमें बिठाया हुआ है, उन्हें बाहर प्रकाशित करके उनकी सेवा करनेका प्रयास ही वास्तविक 'विप्रलम्भ' है।

जिनका इस जगतमें आशा–भरोसा नामक कुछ भी नहीं है–जो इस जगत्का कुछ भी नहीं चाहते, किन्तु केवल भगवान्को ही चाहते हैं, उनपर ही करुणा होगी। इन्द्र! तुम भगवान्की करुणासे विच्युत होओगे। अतएव क्षणकालके लिए तुम युद्धसे निवृत्त होओ, मैं अपने प्रभु सङ्कर्षणको एक बार प्रार्थनापूर्वक पुकारता हूँ। वृत्रासुर युद्धक्षेत्रमें ही निष्कपट और सरल चित्तसे प्रार्थना करके अपने प्रभुको पुकारने लगे–

अहं हरे तव पादैकमूल–दासानुदासो भवितास्मि भूयः।
मनः स्मरेतासुपतेर्गुणांस्ते गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः॥
(श्रीमद्भा॰ ६/११/२४)

अर्थात् हे हरि! कब मेरा ऐसा दिन आयेगा, जिस दिन मैं आपके दासोंका दास हो सकूँगा? जिस दिन मेरा मन सब समय आपकी गुणावलीका चिन्तन कर सकेगा? जिस दिन मेरी देह आपकी सेवा सम्पन्न करेगी? कब मेरा ऐसा दिन होगा? वृत्रासुरके निष्कपट आर्त्तनादको सुनकर स्वयं भगवान्ने युद्धक्षेत्रमें ही आविर्भूत होकर कहा "वरं ब्रूही–वृत्रासुर वर मांगो।" तुम्हें जो वर चाहिए, वह वर लेना। देवता लोग देख रहे हैं कि यदि यह वृत्रासुर इन्द्रपदसे भी ब्रह्मपद चाहे तो क्या होगा? भगवान्ने कहा कि तुम जो चाहते हो, वही मैं तुम्हें दूँगा। किन्तु जो भगवान्के भक्त हैं, वे कुछ भी नहीं चाहते हैं। तब वृत्रासुरने कहा–

न नाकपृष्ठं न च पारमैष्ठ्यं न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम्।
न योगसिद्धिरपुनर्भवं वा समञ्जस त्वा विरहय्य काङ्क्षे॥
(श्रीमद्भा॰ ६/११/२५)

अर्थात् हे प्रभो! मैं इन्द्रपद, ब्रह्मपद, रसातलका आधिपत्य आदि कुछ भी नहीं चाहता। तब क्या तुम योगसिद्धि या मुक्ति चाहते हो? नहीं प्रभु। तब तुम क्या चाहते हो? मैं यही चाहता हूँ कि जब मैं आपके विरहमें निष्कपट–भावसे, एकान्त–भावसे शरणागत होकर निरन्तर रोऊँगा तब आप मेरे हितकी बात, मेरे मङ्गलकी बात चिन्ताकर मुझे दर्शन दिये बिना रह नहीं सकेंगे।जब श्रीगरु–वैष्णवोंके प्रति ऐसी शरणागति सहित विरह उदित होगा, तभी उनके पुनः दर्शन सम्भावपर है।

मेरे प्रति पूज्यपाद महाराजजीका अमृतमय उपदेश

आज एक उन्नतम शिक्षागुरुका विरह–समारोह है। मैंने प्रायः १९८०–८१ ई॰ में मथुरामें स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें पूज्यपाद महाराजजीके प्रथम दर्शन किये थे। उस समय महाराजजीने मझे कहा था–"तरुण प्रभु! यदि जीवनमें सुख पाना चाहते हो, यदि मठवास जीवनको सार्थक बनाना चाहते हो, तो प्रचुर परिमाणमें हरिनाम करना। हरिभजन करनेके लिए ही हम मठमें आये हैं, अतएव हरिभजनके अतिरिक्त हमारा अन्य कोई उद्देश्य नहीं होना चाहिए। एक बात स्मरण रखना कि जो जगतसे कुछ चाहता है, वह श्रीकृष्णको नहीं पा सकता और जो श्रीकृष्णको पाना चाहता है, उसे जगतका कुछ नहीं प्राप्त होगा।" इसी भावनासे वे भजन कराते थे। वे पढ़ने–लिखनेके लिए बहुत उत्साह देते थे। परिक्रमाके समय जब वे मायापुरमें आते थे, तब मुझे देखकर कहा करते कि कैसे हो? पढ़ रहे हो तो? जो पारमार्थिक पढ़ाई करते थे, पूज्यपाद महाराज उन्हें बहुत स्नेह–प्रीति करते थे।

आज मैं कोई दूसरी बात नहीं कहूँगा। मैं केवल यही कहूँगा कि पूज्यपाद नारायण महाराजजीके द्वारा सजाये गये बगानको उनके बाद जो उनके पार्षद हैं, वे पोषण करें, यही श्रील नारायण महाराजजीके चरणोंमें श्रद्धाभक्तिका विशेष परिचय होगा। मैं अपनी अभिज्ञता (समझ) से बाहर कुछ कहनेकी चेष्टा नहीं करुँगा।

वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः॥

[श्रीपाद भक्तिवैभव सागर महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिविलास तीर्थ गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित शिष्य हैं, एवं वर्तमानमें श्रीरूद्रद्वीप गौड़ीय मठ, रुद्रद्वीप, मायापुरके मठ–रक्षक हैं]

अत्यधिक स्नेहशील श्रील महाराजजीकी कुछेक स्मृतियाँ

—श्रीपाद रङ्गनाथ दास ब्रह्मचारी (रङ्ग बाबा)

गुरुदेवके आदेशका सुष्ठुरूपसे पालन करनेवाले

श्रीगुरु महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने पूज्यपाद नारायण महाराजको जो–जो आदेश दिया था, उन्होंने उन–उन आदेशोंका सम्पूर्ण रूपमें पालन किया है। श्रील गुरु महाराजने पूज्यपाद नारायण महाराजको मथुरा मठके संचालनका भार सौपा, जो उन्होंने बहुत सुष्ठु रूपमें निभाया और अपने आश्रितजनों और शिष्योंको अच्छी शिक्षा प्रदान की। वे मुझे भी बहुत स्नेह करते थे।

भक्तवत्सल महाराजजी

एक दिन मैं दर्शनके लिये नन्दगाँव–बरसाना गया था और मुझे आनेमें दो दिनकी देरी हो गई। उन्होंने अन्य–अन्य भक्तोंसे मेरे विषयमें पूछा। फिर उन्होंने मुझे ढूँढनेके लिये भिक्षुक महाराजको भेजा। भिक्षुक महाराजने मुझे सब जगह ढूँढा, किन्तु मैं कहीं नहीं मिला। अंतमें मैं उनको मुखराई गाँवमें मिला जो राधारानीकी नानीका घर है। वहाँके मन्दिरके सेवक गोपीनाथ प्रभुको किसी कार्यसे दिल्ली जाना था, इसलिये वे सारी सेवाका भार मुझपर छोड़कर चले गये। मैंने उनसे कहा कि आप दिल्ली जानेसे पहले मेरे मठ [मथुरा] में कह देना कि आपका वह रङ्गनाथ ब्रह्मचारी मुखराईमें है और वह कुछ दिनके बाद आयेगा। किन्तु वे मथुरा आये ही नहीं और पूज्यपाद नारायण महाराजजी मेरे लिए बहुत चिन्तित हो गये।

जब मैं नवद्वीपमें था, तब मैं वहाँसे पैदल चलता–चलता मथुरा पहुँचा था। पैदल मथुरा पहुँचनेमें प्रायः दो मासका समय लग गया। इसी बीच मेरे आनेसे पहले ही पूज्यपाद वामन महाराजजीने पूज्यपाद नारायण महाराजजीको पत्र भेजकर कहा कि यदि रङ्गनाथ ब्रह्मचारी मथुरा आया है, तो उसे जल्द–से–जल्द वापस नवद्वीप भेज दीजिए, क्योंकि नवद्वीप मठमें अधिक सेवक न होनेसे ठाकुरजीकी सेवामें असुविधा हो रही है। जब मैं मथुरा पहुँचा, तो पूज्यपाद नारायण महाराजजी बोले कि पूज्यपाद वामन महाराजका कितनी बार पत्र आया हैं कि आपको जल्द–से–जल्द वापस नवद्वीप भेज दूँ, क्योंकि अधिक ब्रह्मचारी न होनेसे वहाँ असुविधा हो रही है। तब मैंने पूज्यपाद नारायण महाराजसे निवेदन किया कि मैं दो मास पैदल चलकर मथुरा पहुँचा हूँ, कृपया मुझे मथुरा–वृन्दावन आदिके दर्शन करनेकी अनुमति प्रदान करें। दर्शन करनेके उपरान्त मैं तुरन्त चला जाऊँगा। फिर मैं दर्शन करनेके बाद पुनः नवद्वीप चला गया।

स्नेह एवं क्षमा–गुणसे युक्त

पूज्यपाद नारायण महाराजने अपने जीवनमें पूर्ण रूपसे गुरु महाराजके आदेशोका पालन किया है। वे सुबह–सुबह उठकर स्नान एवं तिलक–आह्निक करके कीर्तन और पाठमें बैठ जाते थे। कभी–कभी अन्य ब्रह्मचारी सुबह पाठ करते थे और महाराजजी शामको पाठ करते थे। पूज्यपाद महाराजजी सभी मठवासियोंको बहुत प्रेम करते थे। मथुरामें बहुत ब्रह्मचारी होनेपर मुझे सेवा नहीं मिलती थी। इसलिये मैं वापस नवद्वीप चला गया, क्योंकि गुरु–गृहमें रहकर सेवा

करनी चाहिये। आठ–दस वर्ष बाद मैं फिर मथुरा आया, क्योंकि यहाँ सेवकोंकी आवश्यकता थी। यदि कोई किसीको असुविधा देता था, तो पूज्यपाद नारायण महाराजजी उसे समझाते थे। जितना लोग पूज्यपाद महाराजजीको स्नेह करते थे, उतना अन्य किसी गुरु–भाईको नहीं करते थे। यदि कोई मठवासी गलत कार्य करता था, तो महाराजजी उसे स्नेहपूर्वक समझाकर क्षमा कर देते थे। किन्तु और कोई ऐसे क्षमा नहीं करता था। यदि कोई हरि भजनके प्रति अन्याय करता तो वे उसे समझाकर हरिभजन करनेके लिये ही कहते थे। उन्होंने बंगला भाषाके कई ग्रन्थोंका अनुवादकर उसे हिन्दी भाषामें प्रकाशित किया। गौर–पूर्णिमाके तीन महीने पहले ही वे चावल भिक्षाके लिये बंगाल चले जाते थे और चावल भिक्षा करके वे सब कुछ मठमें देते थे।

भक्तोंके प्रिय

गौर पूर्णिमाके बाद कुछ भक्त आकर गुरु महाराजसे कहते थे कि आप अगली बार हमारे यहाँ नारायण महाराजजीको ही भिक्षाके लिये भेजियेगा। श्रील गुरु महाराजजी नारायण महाराजजीसे पूछते थे कि तुम पुनः भिक्षा कर सकोगे, तो श्रीनारायण महाराज प्रस्तुत हो जाते थे। वे गुरु महाराजजीकी सब बात मानते थे। गुरु–शिष्यका सम्बन्ध पिता–पुत्र जैसा होता है। जैसे पिताजी होते हैं वैसे ही गुरु होते हैं। गुरु सदा चाहता है कि शिष्य अच्छी शिक्षा प्राप्त करे। गुरु साक्षात् भगवान्‌के समान होते हैं। शिष्य गुरुको भगवान्‌के समान मानता है। जैसे हम भगवान्‌की सेवा करते हैं वैसे ही गुरुकी सेवा करनी चाहिये।

गुरुभ्राताओंकी परस्परमें प्रीति

पूज्यपाद वामन महाराज, पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज और पूज्यपाद नारायण महाराज—ये तीनों सभीको स्नेह करते थे और इनमें किसीके प्रति कोई हिंसा नहीं थी। ये तीनों सभीके प्रति भाई जैसा व्यवहार करते थे। ये तीनों बहुत गम्भीर रूपसे भजन करते थे। इन तीनों गुरु–भाइयोंकी एक दूसरेके प्रति बहुत प्रीति थी।

पूज्यपाद महाराजका मेरे प्रति आदेश

जब गोवर्धनमें मठ बना तो मैं मथुरामें ही रहता था। श्रील नारायण महाराजजी मुझे बोले कि आप अब गोवर्धनमें रहकर ही भजन करो, क्योंकि बहुत समय पहले मैं भी वहाँ रहकर भजन करता था। इस प्रकार उन्होंने ही मुझे मथुरा मठसे गोवर्धनके लिये भेजा।

श्रील गुरु महाराजजीके सेवक

मेरे आनेसे कुछ वर्ष पहले ही पूज्यपाद नारायण महाराज और पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज मठमें आये थे। वे सब नवद्वीपमें ही आये थे। उस समय ब्रह्मचारी बहुत कम थे। अतः उस समय सभी ब्रह्मचारियोंपर बहुत सेवा भार होता था। जब गुरु महाराज मायापुर मठ छोड़ कर आये उस समय पूज्यपाद वामन महाराजजी गुरु महाराजकी सेवा करते थे। पूज्यपाद वामन महाराजके बीमार होनेसे वे श्रील गुरु महाराजकी सेवा नहीं कर पानेसे पूज्यपाद नारायण महाराज ही गुरु महाराजकी सेवामें रहते थे। फिर जब उनके बाद कोई ब्रह्मचारी आया तो वह गुरु महाराजजीकी सेवामें नियुक्त होता क्योंकि गरु महाराजने नारायण महाराजको मथुरा मठका और वामन महाराजजीको नवद्वीप मठका सेवा–भार सौंप दिया था।

महाराजजीके प्रति हरि–कथाके प्रचार हेतु श्रील गुरु महाराजका आदेश

पूज्यपाद वामन महाराज हर समय मठमें रहकर ही भजन करते थे, श्रील गुरु महाराजने उनसे कहा—तुम हरिकथाका प्रचार करो। यही बात श्रील गुरु महाराज पूज्यपाद नारायण महाराजजीको भी बोलते थे। अधिक मन्दिरोंकी आवश्यकता नहीं है, नहीं तो सब समय वहीं रहना पड़ेगा। यदि मन्दिरमें ही रहोगे तो हरि–कथाका प्रचार कौन करेगा?

[श्रीपाद रङ्गनाथ ब्रह्मचारी परमाराध्य नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित हैं तथा वर्तमानमें सदैव श्रीहरिनाम करते हुए श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें वास कर रहे हैं।]

श्रद्धा–पुष्पाञ्जलि

–श्रीपाद शेषशायी दास ब्रह्मचारी

आविर्भाव, दीक्षा, संन्यास एवं गुरुसेवा

ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजका शुभाविर्भाव १९२१ ई॰ में मौनी अमावस्याके दिन ब्रह्ममुहूर्तमें बिहारके बक्सर जिलेके तिवारीपुर नामक ग्राममें हुआ था। इनके माता–पिता दोनों ही श्रीसम्प्रदायके दीक्षित वैष्णव थे। बाल्यकालसे ही इनकी सद्धर्ममें रुचि थी। संसारसे अत्यन्त तीव्र वैराग्य होनेके कारण इन्होंने सन् १९४७ ई॰ में गौड़ीय मठोंके संस्थापक आचार्य नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादके अन्तरंग पार्षद नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव

गोस्वामी महाराजजीसे विधिवत् दीक्षा प्राप्त की। अपने गुरुदेवके साथ इन्हें भारतवर्षके लगभग सभी तीर्थोंकी यात्रा करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ एवं सभी स्थानोंपर गुरुदेवकी हरिकथा सुनकर इन्होंने उनके विचारोंको गम्भीरतासे हृदयङ्गम किया। सन् १९५२ में इन्होंने श्रील गुरुदेवसे संन्यास ग्रहण किया। कुछ समय पश्चात् गुरुदेवने इन्हें हिन्दी भाषी क्षेत्रमें श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणीका प्रचार करनेके लिए श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ मथुराके संचालकके रूपमें नियुक्त किया। यहाँसे इन्होंने गुरुदेवकी आज्ञा एवं कृपासे हिन्दीमें श्रीभागवत पत्रिकाका सम्पादन आरम्भ किया एवं जैवधर्म, चैतन्यशिक्षामृत आदि ग्रन्थोंका हिन्दी भाषामें अनुवाद कर उन्हें प्रकाशित किया।

पूज्यपाद महाराजजीके सङ्गकी प्राप्ति

सन् १३६६ बंगाब्द आषाढ़ मासकी पञ्चमी तिथि शनिवारको श्रीश्रीजगन्नाथदेवकी स्नान–यात्राके दिन मेदिनीपुर जिलेके अन्तर्गत नन्दीग्राम थाना श्रीमन्महाप्रभु पदांकपूत (चरणों द्वारा पवित्र) पिछलदा ग्राम, मेरे पूर्वाश्रममें श्रील गुरुमहाराजने पिछलदा पादपीठकी स्थापना की। इसी मठमें श्रीश्रीगुरु नित्यानन्द गौर राधाविनोदबिहारी जिऊ प्रतिष्ठित हुये।

पिछलदा ग्राम निवासी श्रीयुत् गौर गोविन्द दासाधिकारी मेरे पथप्रदर्शक गुरु थे। उनकी चेष्टासे ही मैं और श्रीपाद कानाई प्रभु मठमें आये। तत्पश्चात् १९५९ ई० में मैं श्रील नारायण महाराजजीके निकट मथुरा आया।

महाराजजीकी सेवाका सुयोग प्राप्त

जिस समय मैं श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें आया उस समय मठमें अधिक सेवकवृन्द नहीं थे। प्राय: ५–६ ब्रह्मचारी ही थे। मैं ही श्रील महाराजजीकी रसोई बनाता, वस्त्र इत्यादि साफ करता एवं उस समय जितने भी पत्रादि आते थे उनका उत्तर महाराजजी मेरे माध्यमसे ही देते थे। श्रील महाराजजी जहाँ भी प्रचारके लिए जाते, मुझे साथ लेकर जाते थे। वर्ष १९५९ ई० में विश्वरूप महोत्सवके दिन श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजीका संन्यास हुआ था, तथा उसी दिन गुरु महाराजने मुझे भी अरुण वस्त्र प्रदान किये थे। गुरुदेवके आदेशानुसार श्रील महाराजजीने मुझे अर्चन, रसोई इत्यादिकी शिक्षा दी।

श्रील गुरु महाराजके विरहोत्सवके लिए श्रील महाराजजी स्वयं वृन्दावन, गोवर्धनके समस्त मठोंमें जाकर निमन्त्रण करते एवं मठ आकर रसोई इत्यादिमें योगदान भी करते थे।

श्रील स्वामी महाराजके द्वारा महाराजजीको कीर्त्तन करनेका आदेश

श्रीवृन्दावनमें स्थित श्रीराधादामोदर मन्दिरसे श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी प्राय: मथुरा आया करते थे। एक समय उड़ीसाके राज्यपाल श्रीधाम वृन्दावनमें श्रीराधा दामोदर मन्दिरमें श्रीश्रीराधा दामोदरजीके दर्शनके लिए उपस्थित हुये। वहाँके पुजारियोंके द्वारा उनके स्वागतमें विभिन्न वाद्ययन्त्रोंकी व्यवस्था की गयी, किन्तु राज्यपालके

©The Bhaktivedanta Book Trust International, Inc. All rights reserved. Used with permission.

©Candramukhī dāsī

आनेपर सुर लगानेमें हो रही देरीको देखकर श्रील स्वामी महाराजजीने श्रील महाराजजीको कीर्तन करनेको आदेश किया। तब श्रील महाराजजीने बड़े ही सुमधुर कंठसे 'जय राधामाधव, जय कुञ्जबिहारी' पदका कीर्तन किया। कीर्तन समाप्त होनेपर श्रील स्वामी महाराजने अंग्रेजी भागवतम्की एक प्रति राज्यपालको भेंट की। राज्यपाल ठाकुरको प्रणामी देकर इमली तलाको चले गये। उस समय ठाकुरके बरामदेमें श्रीराधा–दामोदरके गोस्वामी लोग हारमोनियम, तबला, सितार लेकर सुर–साज (ताल–साज) कर रहे थे। तब गोस्वामियोंने क्रोधित होकर कहा कि सन्यासियोंने राज्यपालको कीर्तन सुनाया और हमको कीर्तन करने नहीं दिया। तब उत्तरमें स्वामी महाराजजीने कहा कि आप लोग तो सुर लगानेमें ही समय लगा रहे थे, राज्यपाल तब तक थोड़े ही न रुके रहते।

पूज्यपाद महाराजजीकी कुछेक स्मृतियाँ

आज मैं अतिमर्त्य, अहैतुकी करुणालय ज्येष्ठ गुरुभ्राता पूज्यपाद श्रीनारायण महाराजकी कुछेक स्मृतियाँ ही उनके श्रीचरणोंमें श्रद्धापुष्पाञ्जलिके रूपमें अर्पण करता हूँ।

१. मथुरामें प्रतिदिन घर–घरमें हरिकथा–कीर्तन करते–करते ही मठमें वापस आते। प्रतिवर्ष कार्तिक मासमें एक बस लेकर नन्दग्राम, बरसाना, आदि बद्री, केदारनाथ, काम्यवनमें जाकर हरिकथा करते। उस समय मथुराके भक्तगण अपने घरसे ही प्रसाद बनाकर ले जाते थे।

२. एक दिन महाराजजी पूज्यपाद वामन महाराजकी आविर्भाव तिथिके दिन कोसी आदि स्थानमें गये वहाँ हरिकथा कीर्तन इत्यादि और खिचड़ी प्रसाद द्वारा उत्सव किया।

३. श्रील स्वामी महाराजके एक बार विदेशसे आनेपर तुरन्त महाराजजीको वृन्दावनमें बुलाया गया। महाराजजी उस समय संध्यामें पाठ करने बैठे ही थे। जब सुना कि स्वामी महाराजजी अस्वस्थ हैं, तुरन्त पाठ छोड़कर उनके दो सन्यासी शिष्योंके साथ चल दिए। महाराजजीने मुझे भी साथमें ले लिया था। श्रीस्वामी महाराजने कहा कि मेरे गुरु भाई मुझसे नाराज हैं। आप मेरी ओरसे उनसे क्षमा माँगिये और मेरे अप्रकटके बाद सभी गौड़ीय मठोंमें भण्डारा कीजियेगा। मेरे शिष्योंको शिक्षा दीजिएगा। श्रील स्वामी महाराजके अप्रकटके दिन रात्रिमें हम श्रीकृष्ण–बलराम मन्दिरमें रहे और सुबह मङ्गल

आरतिके बाद वृन्दावनके सातों देवालयोंके दर्शन किए। मार्गमें श्रील महाराजजीने बहुत देर तक कीर्त्तन किया और दोपहरमें लगभग १२ बजे श्रील महाराजजीने ही उन्हें समाधि प्रदान की।

[श्रीपाद शेषशायी ब्रह्मचारी नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित हैं तथा उन्हींके आदेशसे गुरुदेव श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके आनुगत्यमें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें अपनी सेवाएँ समर्पित कर रहे हैं। ये श्रील गुरुदेवके स्नेह–भाजन रहे हैं एवं वर्तमान समयमें नाम–सङ्कीर्तन करते हुए मठजीवन यापन कर रहे हैं।]

श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीके श्रील महाराजजी

[श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें ९/१/२०११ को आयोजित विरह–सभामें प्रदत्त पुष्पाञ्जली]

©Vasanti & Anitā dāsī

विश्वदूत—

—श्रीपाद भक्तिविदग्ध भागवत महाराज

मंगलाचरण

सर्वप्रथम श्रीभगवत् सम्बन्धज्ञान प्रदाता परमाराध्यतम श्रील गुरु महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजजीके चरणोंमें प्रणत होकर उनकी अहैतुकी कृपा एवं आशीर्वादकी याचना करता हूँ। सपार्षद जगद्गुरु श्रील प्रभुपादकी चरणवन्दनाकर और जिनके विरह—महोत्सवके उपलक्ष्यपर हम सभी एकत्रित हुए हैं उन नित्यलीलाप्रविष्ट पूज्यपाद श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी चरणवन्दना कर उनकी अहैतुकी कृपा एवं आशीर्वादकी प्रार्थना करता हूँ।

श्रील महाराज—'मानद' धर्ममें सुप्रतिष्ठित एवं प्रचार—सेवा हेतु सदैव उत्साह प्रदान करनेवाले

पूज्यपाद श्रील महाराजजी कई वर्षोंसे श्रीरूप—सनातन गौड़ीय मठमें श्रील रूप गोस्वामीकी विरह—तिथिके उपलक्ष्यमें मुझे बुलाते थे। वे मुझे स्नेह करते थे, योग्यता नहीं रहनेपर भी मुझे अपने पास बैठाते थे, नीचे नहीं बैठने देते थे। वे सब समय मुझे प्रोत्साहित करते थे कि प्रचार कभी भी बन्द नहीं करना, प्रचार अवश्य करते रहना। परन्तु अब हमें दिशा—निर्देश देनेवाले गुरुवर्गके चले जानेके बाद हमारे ज्येष्ठगुरुभ्राता—पूज्यपाद महाराजजीके भी चले जानेके बाद प्रचार करनेके लिए जो उत्साह है, वह लगता है कि अभी कुछ घट गया है। मैं तो अपने लिए ऐसा ही अनुभव करता हूँ। हमारे पूजनीय, आदरणीय एवं वन्दनीयके रूपमें पूज्यपाद महाराजजी हमारी स्मृतिमें सब समय ही रहेंगे। प्रचार करने हेतु जानेपर भी ऐसे व्यक्तित्वका अभाव हमें हर पग—पगपर अनुभव होता रहेगा।

श्रील प्रभुपादकी परम्पराके विचारोंकी रक्षा करनेवाले

श्रील नारायण महाराजजीके जानेके बाद अब कोई सिद्धान्तका विरोध होगा, तो हम किसके पास जायेंगे? कुछ वर्ष पहले की एक घटनाको मैं संक्षेपमें ही बताऊँगा। कुछ गौड़ीय—नामधारी व्यक्ति गौड़ीय—मठके सम्बन्धमें सब समय कुछ—न—कुछ बातें उठाते ही रहते थे। पूज्यपाद महाराजजीने बड़े कड़े शब्दोंमें शास्त्रीय सिद्धान्तोंसे श्रील प्रभुपादकी धाराके विचारोंकी रक्षा करते हुए उनके प्रतिवादमें 'प्रबन्ध—पञ्चकम्' नामक पुस्तक के रूपमें उत्तर प्रदान किया था, किन्तु वे नामधारी—गौड़ीय इसका कोई प्रत्युत्तर नहीं दे पाये, और उस पुस्तकने उन नामधारी गौड़ीय—वैष्णवोंके मनमें हलचल मचा दी।

पूज्यपाद महाराजजी—अतत् निरसन और तत्त्व वस्तुके स्थापनमें सिंहके समान

मूल रूपानुग–धारा श्रीचैतन्य महाप्रभुसे ही आ रही है, किन्तु बहुत–सी विभिन्न धाराएँ श्रीरूपानुग–धाराके नामसे अपनेको प्रस्तुत करती हैं। यह आजकी बात नहीं है, ऐसा बहुत समयसे हो रहा है। पूज्यपाद नारायण महाराजजी ऐसी तथाकथित रूपानुग–धाराओंको सदा उजागर करके उन्हें उनके वास्तविक स्तरपर ला खड़ा करते थे। ये एक बहुत मुख्य बात है। एक ओर हमारी धारामें श्रीस्वरूप–रूप–सनातन गोस्वामी जैसे रागानुग आचार्यों द्वारा आचरित और प्रचारित मूल विचारको प्रस्तुत करना तथा दूसरी ओर जो रूपानुग–धाराकी आड़में दूसरे विचारों [अपसिद्धान्तों] का प्रचार करते हैं, जो श्रीरूपानुग धाराके विरुद्ध हैं, उनके मिथ्यावादका खुलासा करना—ये दोनों ही अत्यन्त आवश्यक है—एक अतत् निरसन और दूसरा तत्त्व–वस्तुका स्थापन। दोनों पहलुओंमें पूज्यपाद महाराजजी सिंहके समान थे।

श्रीगुरु महाराजसे महाराजजीका सम्बन्ध

मेरे गुरु महाराज बहुत बार मुझे महाराजजीके पास भेजते थे, क्योंकि गुरु महाराजजी पूज्यपाद नारायण महाराजजीको तबसे जानते थे जबसे वे मठमें आये और पूज्यपाद नारायण महाराजजी भी कहते थे कि मैं ही श्रील पुरी महाराजजीका पहला सेवक हूँ। जब मेरे गुरु महाराज चाम्पाहाटीमें संन्यास लेकर वर्ष १९४७में श्रीउद्धारण गौड़ीय मठमें त्रिदण्डी संन्यासीके रूपमें वास करने आये थे, उस समय पूज्यपाद नारायण महाराज मठमें नये भक्तके रूपमें आये थे। तब उनके गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीने उन्हें मेरे गुरु महाराजजीकी सेवामें नियुक्त किया था। इसलिए मेरे गुरु महाराजजी उन्हें पहलेसे ही जानते थे और उनके प्रति बहुत स्नेह रखते थे। श्रील गुरु महाराजजी कहा करते थे कि श्रीपाद नारायण महाराज वास्तवमें विद्वान हैं और मैं उन्हें बहुत समयसे जानता हूँ। पूज्यपाद नारायण महाराजजी अपने नये ग्रन्थोंको समर्पण करनेके लिए अनेक बार मेरे गुरु महाराजजीके पास जाते थे। गुरु

महाराजजी भी उन ग्रन्थोंको ग्रहणकर बहुत आनन्दित हुआ करते थे। मैं यह जानता हूँ, क्योंकि मैं भी इसका साक्षी हूँ।

कुछ गौड़ीय–वैष्णवोंमें जीवके स्वरूपके सम्बन्धमें कुछ वाद–विवाद था कि जीवकी उत्पत्ति कहाँसे हुई है और जीवने किस प्रकार संसार बन्धनको प्राप्त किया है। एक पक्षवाले कहते कि जीव वैकुण्ठ या रासलीलासे पतित होते हैं, वे ऐसा अपने गुरुवर्गकी वाणीका प्रमाण लेकर कहते थे। पूज्यपाद महाराजजी इसके सम्बन्धमें चर्चा करनेके लिए श्रील गुरु महाराजजीके पास आये थे कि यह कैसे सम्भव है कि कोई वैकुण्ठसे पतित हो सकता है और बद्धजीव बन सकता है? श्रील गुरु महाराजजीने पूज्यपाद महाराजके साथ इस विषयमें एवं अन्यान्य विषयोंमें बहुत–सी विवेचनाएँ की थीं।

अप्राकृत वाणी—ग्रन्थरूपी वैभवमें धनी—पूज्यपाद महाराज

मैंने यह लक्ष्य किया कि बहुत पहले जब श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठ नहीं बना था, तब श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ ही था और वहीं पर पूज्यपाद महाराजजी रहा करते थे। मैं जब कभी भी श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें पूज्यपाद महाराजसे मिलने गया, मैं उनकी भजन कुटीरमें उनके ग्रन्थालयको उत्सुकतासे देखता था, क्योंकि मैं बचपनसे ही ग्रन्थोंके लिए उत्सुक रहा। उस समय श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ महीनेमें दो बार द्वाद्वशी भिक्षासे चलता था। बहुतसे लोग ऐसी विवेचना किया करते कि पूज्यपाद महाराजके पास धनका अभाव है, यह मठ गरीब है और कोई अन्य मठ धनी है। किन्तु मैं जब पूज्यपाद महाराजजीके चारों ओर उनकी ग्रन्थावलीको देखता, उनके पास ग्रन्थोंसे भरी हुई दस अलमारियाँ थीं, तो मैं सोचता कि कौन कहता है कि महाराजजीके पास धनका अभाव है, बल्कि वे ही सबसे धनी हैं। मेरे गुरु महाराजजीने दीक्षा ग्रहण करनेके समय मुझे आदेश दिया था कि जहाँसे सम्भव हो, तुम ग्रन्थोंकी भिक्षा करना। मेरे गुरु महाराजजीने मुझे कभी भी धन भिक्षा करनेके लिए नहीं कहा। इसलिए महाराजजीके ग्रन्थालयको देखकर मैं सोचता कि यथार्थमें श्रील महाराजजी सबसे धनी हैं। इसका कारण है कि वास्तवमें श्रीकृष्ण अपनी अप्राकृत वाणी अर्थात् ग्रन्थरूपी वैभवके रूपमें ही expand हुए हैं।

रसिक–भक्त–शिरोमणि पूज्यपाद महाराजजीका वैभव श्रीमन्महाप्रभु द्वारा अनुमोदित

पूज्यपाद महाराजजी श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठ, इस श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ अथवा श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठको स्थापन करनेसे ही महिमावान हुए हैं—ऐसा नहीं, अपितु वे पहलेसे ही महिमावान थे। उनका यशरूपी वैभव श्रीमन्महाप्रभु द्वारा अनुमोदित है कि श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजी सम्पूर्ण विश्वमें रसिक–भक्त–शिरोमणिके रूपमें प्रसिद्ध हों। वे तो पहलेसे भी रसिक भक्त थे। किन्तु ये सब मठरूपी वैभव रहनेपर भी वे रसिक–भक्तके रूपमें देखे जा सकें, क्योंकि यह महाप्रभु द्वारा ही अनुमोदित वैभव है। श्रीमन्महाप्रभुकी इच्छा थी कि सम्पूर्ण विश्व महाराजजीकी ओर देखे और उनके पथका अनुसरण करके भगवान्‌के पास पहुँचे। यही श्रीचैतन्य महाप्रभुका मिशन था और पूज्यपाद महाराजजी इसके माध्यम बनें। इस कार्यके लिए श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा किसीको मनोनीत करना, किसी साधारण व्यक्तियोंके द्वारा मनोनीत या विज्ञापन द्वारा प्रसिद्ध होने जैसा नहीं है। यह स्वयं श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा मनोनीत होना है।

भजनानन्दी और गोष्ठानन्दी

हमारे गुरु महाराज कहा करते थे कि बहुत लोग भजन कर सकते हैं और बहुत लोग भजनमें सिद्धि भी प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु जिन्हें श्रीमन्महाप्रभु इस विश्वमें अपनी वाणीके दूतके रूपमें मनोनीत करते हैं, वही गौरवाणीको—महाप्रभुके मिशनको विश्वभरमें प्रचार करनेमें समर्थ हो सकेंगे, अन्य नहीं। यही भजनानन्दी और गोष्ठानन्दीमें भेद है। यह नहीं है कि गोष्ठानन्दी भजनानन्दी नहीं हैं, वे भजनानन्दी तो हैं ही, क्योंकि भजनानन्दी हुए बिना कोई गोष्ठानन्दी नहीं हो सकता है। किन्तु जब कोई श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा अनुमोदित होकर

उनके दूतके रूपमें उनके द्वारा मनोनीत होता है, वही वास्तवमें गोष्ठानन्दी कहा जायेगा। पूज्यपाद महाराजजी भजनानन्दी और गोष्ठानन्दी दोनों ही थे। वे श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा मनोनीत थे। सर्वप्रथम नित्यलीलाप्रविष्टश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी, उनके बाद नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिरक्षक श्रीधर महाराजजी, उनके बाद हमारे गुरु महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी महाराजजीके अप्रकटके बाद पूज्यपाद नारायण महाराजजी महाप्रभुके द्वारा गौरवाणी प्रचार करनेके लिए मनोनीत किए गये थे। यह तो भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभुके ऊपर है कि वे किनके द्वारा अपनी वाणीका प्रचार करवाना चाहते हैं। हमें उनकी इच्छाके अनुरूप समर्पण करना चाहिए। अतएव जो कोई भी श्रीमन्महाप्रभुके पथानुगामी है, उन्हें इस सत्यको अवश्य ही स्वीकार करना होगा अर्थात् महाप्रभुने जिन्हें भी अपनी वाणीके विश्वदूतके रूपमें स्वीकार किया है, उन्हें किसी भी स्वार्थसे रहित होकर स्वीकार करना होगा और उनकी प्रशंसा करनी होगी।

विरह–महोत्सवमें भाग लेनेका कारण

मैं स्वयं ये अनुभव कर रहा हूँ कि श्रील महाराजजी आनन्दमें थे, वे आनन्दमें हैं और सदा ही आनन्दमें रहेंगे। उनके इस विरह–उत्सवमें मैं अपने मङ्गलके उद्देश्यसे ही आया हूँ। नामाचार्य श्रीलहरिदास ठाकुरके निर्याणके बाद श्रीमन्महाप्रभुने यह वरदान दिया था कि जो भी श्रील हरिदास ठाकुरके समाधि उत्सवमें उपस्थित थे, जिन्होंने उनके विरहोत्सवमें भाग लिया था और जिन्होंने उनके विरह–महोत्सवमें प्रसाद ग्रहण किया है, वे सभी श्रीकृष्णप्रेमको प्राप्त करेंगे। मैं इसी लोभसे आया हूँ। अतएव आज मेरे यहाँ आनेका उद्देश्य वक्तृता देना आदि नहीं है, बल्कि पूज्यपाद महाराजजीके निकटस्थजनों और अन्यान्य भक्तोंसे महाराजजीकी महिमाको श्रवण करना और प्रेमकी एक बूँद प्राप्त करना ही है। इसलिए मैं श्रील नारायण महाराजजीसे और सभी वैष्णवोंसे प्रार्थना करता हूँ कि आप सभी मेरे प्रति कृपा बनाये रखें, जिससे कि एक दिन मैं श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदत्त 'अनर्पित चरीं' प्रेमको अनुभूत कर सकूँ।

वाञ्छाकल्पतरुभ्य कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः॥

[श्रीपाद भक्तिविदग्ध भागवत महाराज नित्यलीला प्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजजीके चरणाश्रित हैं तथा नन्दग्राम स्थित पावन सरोवरके तटपर श्रील सनातन गोस्वामीके भजन–कुटीरमें रहते हैं]

व्रजके विख्यात सन्त एवं गणमान्यजनोंकी पुष्पाञ्जली

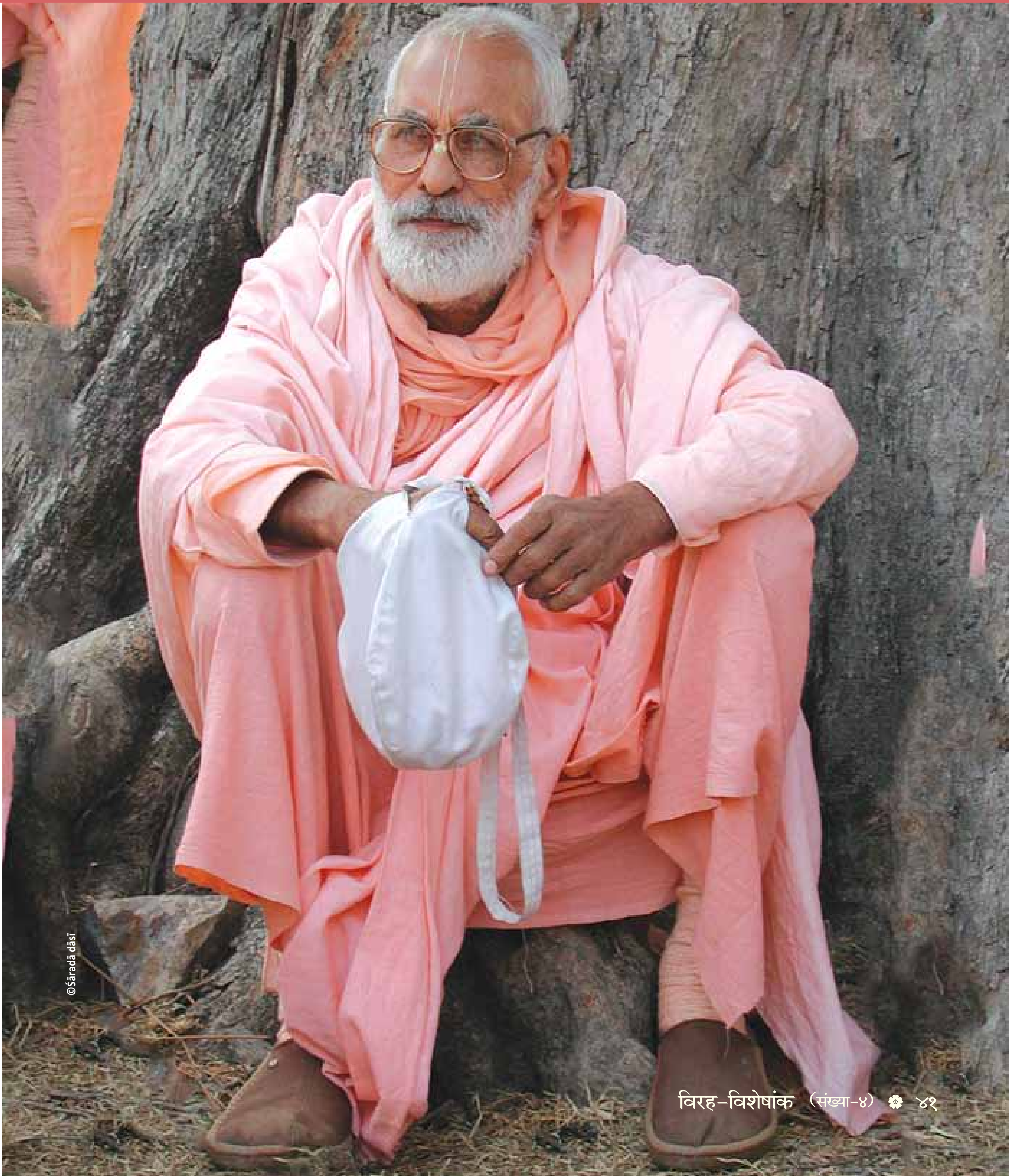

©Śāradā dāsī

श्रीनारायण महाराजजी—सच्चे सद्गुरु

—श्रीरमेश बाबा महाराज[१]

श्रीमान मन्दिर सेवा–संस्थान ट्रस्ट

मान मन्दिर,
गह्वरवन, बरसाना,
जिला–मथुरा २८१४०५
उत्तर प्रदेश, भारत

तिथि—२० अगस्त २०११

केवल सत्सङ्गसे ही निर्भयताकी प्राप्ति

इस संसारमें अन्धा अन्धेका गुरु बन रहा है। वास्तवमें सद्गुरु कहीं दिखलाई ही नहीं पड़ते। बिना सद्गुरुके किसीका भी कल्याण सम्भव नहीं है। जीव अनादि कालसे भगवान्से विमुख हैं। जीवको सदा मृत्यु–शोकादि अनेक प्रकारके तापोंका भय बना ही रहता है। ऐसे भय प्रदान करनेवाले संसारमें निर्भयता मिले कैसे? निर्भयताको यदि कोई ज्ञानके बलपर प्राप्त करना चाहे, तो वह असम्भव है। ब्रह्माजी जिनकी आयु दो परार्द्ध है, वे भी अभयपद देनेमें समर्थ नहीं हैं। संसारमें कहीं निर्भयता नहीं है। किसी भी योनिमें चले जायें, निर्भयता नहीं है, यदि है तो केवल महापुरुषोंके पास। उनके पास जाकर सत्संग करनेसे वह निर्भयपद सहज ही प्राप्त हो जाता है। आत्यन्तिक क्षेम अर्थात् सम्पूर्ण मङ्गल केवल साधु–सन्त ही दे सकते हैं।

महापुरुषोंके प्रति शरणागति ही भवसागरसे पार होनेका एकमात्र उपाय

व्रज सदासे सत्पुरुषों, सन्त–महात्माओंकी पावन भूमि रहा है। इसी व्रजमें अपने अलौकिक ज्ञानकी आभासे लाखों जीवोंको निर्भयताकी ओर अग्रसर करनेवाले परमपूज्य सन्तप्रवर श्रीनारायण महाराजजी वास्तवमें सच्चे सद्गुरु रहे जो आज श्रीराधामाधवके नित्य–लीला धाममें जानेके पश्चात् भी सभीके हृदयमें विराजमान हैं। ऐसे वीतराग (विषयासक्ति शून्य) महापुरुषके प्रति शरणागति जीवको सहजमें ही भवसागरसे पार करा देती है। ब्रह्मा–शंकर तक भी बिना सद्गुरुके पार नहीं पा सकते। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने शंकरजीको युगलमंत्रका उपदेश दिया और ब्रह्माजीको वेदका ज्ञान दिया।

---

१ श्रीरमेश बाबा महाराज द्वारा कथित विषय वस्तु उनके सचिव–सेवक राधाकान्त शास्त्री द्वारा लिखी गयी है

©Vasantī & Anitā dāsī

व्रजधाम एवं व्रजवासियोंके प्रति अगाध प्रीतिसे युक्त श्रीनारायण महाराज

श्रीनारायण महाराज साम्प्रदायिक संकीर्णताओंसे ऊपर उठकर समस्त जनमानसके प्रिय हो गये थे। उन्होंने न केवल अपने अलौकिक ज्ञानकी आभासे भक्तोंको आह्लादित किया, अपितु भगवान् श्रीकृष्णकी लीला–स्थलियोंके प्रति अपने अगाध प्रेमको भी प्रकट किया। व्रजधाम एवं व्रजवासीजनोंके प्रति उनकी अगाध प्रीति थी। इसका अनुमान तब लगा जब एकबार दीर्घकालसे व्रजके विरक्त संत श्रीरमेश बाबा महाराज जो श्रीमान–मन्दिर, गह्वरवन बरसानामें पिछले ६० वर्षोंसे अखण्ड व्रजवास करते हुए व्रजके दिव्य पर्वतोंको नष्ट होता देख व्रजरक्षार्थ वर्ष २०००ई० में सखीगिरि पर्वतपर धरना देकर बैठे थे, तब सबसे पहले श्रीनारायण महाराजजी अपने शिष्य–परिकरोंके साथ वहाँ पहुँचे और अपना पूर्ण समर्थन व्यक्तकर उन्होंने आन्दोलनको सशक्त बनाया था। ऐसे ही महापुरुषोंके प्रयासका परिणाम है कि आज व्रजभूमिके दिव्य पर्वत खनन–माफियाओंसे मुक्त हो गये और भगवान्‌की अनेक लीला–स्थलियाँ नष्ट होनेसे बच गयीं हैं।

देश–विदेशमें दिव्य–रसमयी–वाणीकी वर्षा करनेवाले

ऐसे भगवत्प्रेमी, समाज–सेवी, निष्काम और निःस्पृह सन्त भगवत्कृपासे ही मिलते हैं। सांसारिक आसक्तियोंके कारण जीव ऐसे सत्पुरुषोंसे मिलकर भी अभागा बना रहता है। यदि उनकी ऐसे महापुरुषोंमें आसक्ति हो जाये तो सहजमें निःसंगता आ जाय।

संगो यः संसृतेर्हेतुरसत्सु विहितोऽधिया।
स एव साधुषु कृतो निःसङ्गत्वाय कल्पते॥

(श्रीमद्भा० ३/२३/५५)

अर्थात् हे देव! असत्पुरुषोंके साथ जो सङ्ग संसार–बन्धनका कारण होता है, वही सङ्ग सत्पुरुषोंके साथ किये जानेपर मुक्तिका कारण–स्वरूप होता है।

अपनी दिव्य रसमयी वाणीसे श्रीनारायण महाराजजीने देश–विदेशके कितने ही जीवोंको निर्भयताका मार्ग दिखलाया है। उनका कृतित्व उनके भक्तोंके रूपमें सदा विद्यमान रहेगा तथा उनकी कीर्ति सदा अमर रहेगी।

[विरक्त सन्त श्रीरमेश बाबा महाराज श्रीमान–मन्दिर, गह्वरवन बरसानामें पिछले ६० वर्षोंसे अखण्ड व्रजवास कर रहे हैं एवं व्रजकी लीला–स्थलियोंके संरक्षण हेतु समर्पित हैं।]

नित्यलीलाप्रविष्ट अष्टोत्तरशतश्री गोस्वामी महाराजके प्रति सुमन

श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायके आचार्योंके साथ मेरे पूर्वजोंका सम्बन्ध

मथुरा व्रजतीर्थमें हमारा घर बड़े चौबेजीके घरके नामसे जाना जाता है। हमारे पूर्वज वेदनिष्ठ श्रीउजागर चौबेजी थे जो बावन (५२) राजाओं तथा चारों सम्प्रदायके तीर्थ पुरोहित थे। हमारे वंशज लगभग ५०० वर्षोंसे तीर्थ पुरोहितका काम करते आ रहे हैं। मध्व–सम्प्रदायके अन्तर्गत श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायमें श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रकट हुए जो साक्षात् श्रीकृष्ण हैं। उसी समय श्रील रूप गोस्वामी, श्रील सनातन गोस्वामी आदि छः गोस्वामियोंका प्रादुर्भाव हुआ था। उन सभीने हमारे पूर्वज बड़े चौबे श्रीउजागर चौबेजीको मथुरा–मण्डलके तीर्थ पुरोहितके रूपमें वरण किया था। तत्पश्चात् सन् १९३२ में श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायके संरक्षक ॐ विष्णुपाद परमहंस श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी मथुरा–व्रजमण्डलकी चौरासी कोसकी यात्रा करने हेतु मथुरा पधारे। उस समय हमारे पिता

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण श्रद्धाञ्जली

श्रीयमुना प्रसाद चतुर्वेदी
(बड़े चौबे, तीर्थ पुरोहित, मथुरा)

श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती महाराजके साथ श्रीगिरि महाराज, श्रीतीर्थ महाराज, श्रीभागवत महाराज, श्रीबोधायन महाराज, श्रीअतुलचन्द, श्रीकुञ्जबाबु आदि (जिन्होंने खातेमें हस्ताक्षर किया है) बहुतसे भक्त भी यात्रामें पधारे थे।

श्रीगोपालचन्दजी (पुत्र श्रीवृन्दावनचन्द्रजी) ने मथुराके मुख्य–तीर्थ विश्रामघाटपर श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादजीकी व्रजमण्डल परिक्रमाकी यात्राका संकल्प और श्रीयमुनाजीका पूजन आदि कार्य कराये तथा उनके साथ रहकर व्रजमण्डल चौरासी कोसकी यात्रा कराई। इस यात्राका विवरण हमारे तीर्थ पुरोहताईके खातेमें उपलब्ध है। उसी समयसे हमारा तथा श्रीगौड़ीय–सम्प्रदायके आचार्योंका सम्बन्ध चला आ रहा है। ॐ विष्णुपाद परमहंस

महाराजश्रीके अप्राकृत स्नेहकी कुछेक स्मृतियाँ

सन् १९५४ में त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज व्रजयात्रा हेतु पधारे थे। उन्हींके साथ श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराज भी यात्रामें उपस्थित थे। उसी समय महाराजजीसे मेरा प्रथम साक्षात्कार हुआ था। तभीसे मेरा और महाराजजीका सम्बन्ध चला आ रहा है। महाराजजीका मेरे प्रति अगाध प्रेम व स्नेह था। वे अनेक कार्योंमें मुझसे परामर्श लेते थे। वे मुझे अपना पारिवारिक

सदस्य समझते थे तथा कहा करते थे कि तुम मेरे तीर्थ पुरोहितके साथ–साथ मेरे मित्र भी हो। मैं भी महाराजश्रीको अपने शिक्षा–गुरुके रूपमें मानता था। जब भी गौड़ीय मठमें कोई यात्री मथुरा दर्शन हेतु आता, वे मुझे बुलाते और मैं महाराजश्रीके आदेशानुसार यात्रियोंको दर्शन आदि करवाके मठमें पहुँचा देता, परन्तु दक्षिणा आदि नहीं मांगता था। तब महाराजश्री स्वयं यात्रियोंसे कहकर दक्षिणा दिलवाते थे।

महाराजश्रीका आदर्श

महाराजश्री प्रतिवर्ष व्रजमण्डल चौरासी कोसकी यात्रा करते आ रहे हैं। गौड़ीय–सम्प्रदायके अन्य किसी भी आचार्योंने प्रतिवर्ष व्रजमण्डलकी यात्रा नहीं की। किसी आचार्यकी यात्रा ३ वर्षके बाद, किसीकी यात्रा ५ वर्षके बाद होती है, किन्तु महाराजश्रीकी यात्राका क्रम प्रतिवर्ष निरन्तर चल रहा है। महाराजश्री प्रति वर्ष व्रज चौरासी कोसकी

परिक्रमामें मुझे बुलाकर मेरे साथ विश्राम घाट पधारते थे। वहाँ भी श्रीयमुनाजीका पूजन, व्रजयात्राका संकल्प आदि कार्य मेरे द्वारा ही करवाते थे। इस प्रकार महाराजश्रीका मेरे प्रति अगाध स्नेह था तथा समय–समयपर जन्माष्टमी, गोवर्धन–पूजा, रक्षा–बन्धन आदि पर्वोंपर मुझे दक्षिणा, वस्त्र आदि देकर मेरा सम्मान करते थे।

सभीके संशयोंका छेदन करनेमें परम समर्थ महाराजश्री

महाराजश्री जन्माष्टमीके बाद प्रतिवर्ष ब्राह्मणोंको बुलाकर उनका यथोचित सम्मान तथा सत्कार करते थे। मथुरा, वृन्दावनमें और गोवर्धनमें विद्वत सभा बुलाकर ब्राह्मणों, चतुर्वेदियोंका सम्मान किया करते थे। महाराजश्रीमें एक विशेषता यह थी कि कोई भी विद्वान किसी प्रकारकी शंका किया करते तो महाराजजी तत्काल उसका निवारण कर देते थे तथा वह सन्तुष्ट हो जाता था। मैंने कई बार ऐसा देखा कि जो भी व्यक्ति किसी प्रकारका कोई प्रश्न करता था महाराजश्री शीघ्र ही उसका समाधान कर देते थे।

व्रजवासियोंके हितकर्ता

महाराजश्रीने व्रजमण्डल चौरासी कोसमें बहुतसे कुंडोंका जीर्णोद्धार करवाया। गोवर्धनमें ब्रह्मकुण्ड, जो वर्षोंसे बन्द पड़ा था, उसकी सफाई कराई। जल भरनेकी व्यवस्था कराई। तथा व्रजमण्डलके ग्रामवासियोंकी सुविधा हेतु बहुतसे सार्वजनिक निर्माण कार्य भी करवाये। आज भी व्रजमण्डलके निवासी महाराजश्रीको स्मरण करते हैं।

सभी सम्प्रदायके अनुयायियोंका सम्मान करनेवाले

महाराजश्रीने कभी भी किसी अन्य सम्प्रदायके आचार्योंकी भर्त्सना नहीं की, बल्कि वे सभी सम्प्रदायोंके आचार्योंका आदर सत्कार करते थे। समय–समय पर विद्वत सभामें अन्य सम्प्रदायोंके अनुयायियोंको भी बुलाकर उनका यथोचित आदर सम्मान करते थे।

महाराजश्रीकी दीनता

महाराजश्री जब भी विदेश यात्रापर पधारते थे, व्रजवासी ब्राह्मणों, विद्वानों, पण्डितोंको बुलाकर सभा करते थे तथा सभीका आशीर्वाद लेकर विदेश यात्राके लिये पदार्पण करते थे। बादमें मैं स्वयं ही अकेला आता था तथा महाराजजीकी यात्रा मंगलप्रद हो ऐसा आशीर्वाद देता था तथा महाराजजीके विदेशसे मथुरा आनेपर महाराजश्री विदेशका सब समाचार बतलाते थे कि प्रचारमें किस–किस प्रकारकी असुविधा आती थी तथा गुरु महाराजजीकी कृपासे सब दूर हो जाती थी तथा सब प्रकारसे धर्मका प्रचार प्रसार होता रहता था।

महाराजश्रीके स्नेहका एक प्रत्यक्ष उदाहरण

एक बार मैं श्रीचैतन्य महाप्रभुके ५०० साल शताब्दी प्रकटोत्सवपर श्रीनवद्वीप धाम गया था। उस समय महाराजश्रीने मेरा जो सम्मान तथा सत्कार किया उसको मैं अपने जीवनमें कभी भी भुला नहीं सकता। उन्होंने वहाँ मेरी सब प्रकारसे देखभाल की जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। मेरे प्रति महाराजश्रीके स्नेहका एक प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि जिस समय महाराजश्री नित्य–लीलामें प्रविष्ट हुए उस दिन सुबह ४ बजेके समय मुझे महाराजश्रीने स्वप्नमें दर्शन दिये। मैं अवाक रह गया तथा सुबह उठकर गौड़ीय मठ गया। उस समय श्रीप्रेमानन्द प्रभुजी द्वारा ज्ञात हुआ कि महाराजश्री आज प्रातः काल ३ बजे ही नित्य–लीलामें प्रविष्ट हो गये हैं। सुनते ही मेरे पैरों तले जमीन खिसक गयी। मैं अवाक–सा खड़ा रह गया। मैंने सोचा की लगभग ६० वर्षसे जिनसे सम्बन्ध था, आज वह नहीं रहे। वे नित्य–लीलामें पधारे हैं तथा उनका नाम एवं कार्य इस जगतमें अमर रहे—यही मेरी प्रार्थना है। इन्हीं शब्दोंके साथ मैं अपनी लेखनीको विराम देता हूँ।

[श्रीयमुना प्रसाद चतुर्वेदी, बड़े चौबे, मथुरा निवासी तीर्थ पुरोहित हैं। ये गौड़ीय मठोंके शुभ–चिन्तक, निःस्वार्थ भावसे सेवा करनेवाले तथा मधुरभाषी तीर्थ पुरोहित हैं।]

पूज्य श्रीनारायण महाराजजी—

श्रीभगवत् चरणारविन्दकी प्राप्तिका मार्ग दिखलानेवाले

पूज्य श्रीनारायण महाराजजी व्रजमण्डलके अद्भुत सन्त थे। वे एक ऐसे माध्यम थे जिनके आलोकमें यह वैष्णव–धर्म दिग्–दिगान्तरमें बहुत फला–फूला और देश–विदेशके अनेकानेक मानवसमूहोंको श्रीभगवत् चरणारविन्दकी प्राप्ति हुई या उन्हें ऐसा मार्ग दिखलाया जिससे वे मानव–जीवनके वास्तविक लक्ष्यको प्राप्त कर सकें। युगों–युगोंतक महाराजश्रीके आशीर्वचनोंसे लोग अपने जीवनका उद्धार करते रहेंगे।

अत्यन्त आत्मीय व्यवहारसे युक्त

सन् १९८५ में श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति आन्दोलन प्रारम्भ हो चुका था। मुझपर मथुरा जनपदमें विश्व हिन्दू परिषद् और बजरंग दलके माध्यमसे इस अभियानको गति देनेका दायित्व था। अतः मेरा हिन्दु अस्मिता (मान–सम्मान) से जुड़े विभिन्न कार्यक्रमोंमें सहयोग करना स्वाभाविक ही था। इस कारण विभिन्न स्थानोंपर हिन्दु सम्मेलन और सन्त सम्मेलन भी आयोजित होते थे और यथासम्भव उनकी समस्याओंके समाधानमें सहयोग देनेका भी प्रयास होता था।

एक दिन बजरंग दलके नगर संयोजक श्रीसतीश डाबर मुझसे बोले कि आपको गौड़ीय मठके महाराजजीने स्मरण किया है, जबकि पूर्वमें मैंने कभी भी महाराजजीके दर्शन नहीं किये थे। मैं डाबरजीके साथ महाराजश्रीकी सेवामें उपस्थित हुआ। प्रथम भेंटमें ही महाराजश्रीके

—व्रजकी अद्भुत विभूति

—श्रीगोपेश्वरनाथ चतुर्वेदी

अत्यन्त आत्मीय व्यवहारको अनुभव किया एवं हिन्दु स्वाभिमानसे जुड़े प्रत्येक अभियानमें उनकी सहभागिताका आशीर्वाद प्राप्त हुआ। मैं अभिभूत था कि सहज ही एक महापुरुषका सम्बल प्राप्त हो गया। जब मैं गौड़ीय मठसे चलने लगा तो महाराजजी बोले कि चतुर्वेदीजी मठके दरवाजेपर एक व्यक्ति अंडेकी ढकेल (रेड़ी) लगाता है और अंडोंकी दुर्गन्धसे मन्दिरमें भजन—कीर्तन करना कठिन हो जाता है। कई बार मना कर चुके हैं—किन्तु झगड़ालू आदमी है—अतः हटनेको तैयार नहीं होता। मैंने कहा महाराजजी आपने सेवा बताकर परम कृपा की है। मुझसे जो बनेगा वह करुँगा। अन्ततः उस अण्डेकी ढकेलको वहाँसे हटना पड़ा। साथ ही महाराजश्रीकी प्रेरणासे बजरंग दलने सम्पूर्ण जनपदमें अभियान चलाया कि किसी भी मन्दिर या आश्रमके पास अण्डेकी ढकेल नहीं लगने दी जायेगी और यह आन्दोलन मथुरामें शत—प्रतिशत सफल भी रहा। फिर तो महाराजश्रीका आशीर्वाद एवं सहयोग प्रत्येक कार्यक्रममें सहज ही उपलब्ध होने लगा। सम्मेलनोंमें आपके ओजस्वी आशीर्वचनके द्वारा हिन्दू समाजको प्रेरणा मिलती थी। चाहे श्रीराम—शिला—पूजनका कार्यक्रम हो या पादुका—पूजनका—गौड़ीय मठका इनमें अधिकतम सहयोग मिलता था।

महाराजश्रीके आशीर्वादका बल

एक समय महाराजजीने श्रीकृष्ण—जन्मभूमिपर श्रीमद्भागवतकथाका आयोजन रखा। उसके लिए शोभायात्रा श्रीकेशवजी गौड़ीय—मठसे जन्मभूमि तक जानी थी, किन्तु प्रशासनने शोभायात्रा निकालनेके लिए मना कर दिया। बहुतसे प्रयास हुये—किन्तु सभी असफल। रात्रिको हमलोग महाराजश्रीकी सेवामें उपस्थित हुए और निश्चय हुआ कि प्रातःकाल भजन—कीर्तन करते हुए जन्मभूमिकी ओर चलेंगे, जो होगा देखा जायेगा। महाराजजीने इसपर अपनी सहज स्वीकृति दे दी। प्रातःकाल धूमधामसे संकीर्तन शोभायात्रा प्रारम्भ हुई। जब प्रशासनको इसकी सूचना मिली—तबतक हम लोग विश्रामघाट पहुँच चुके थे। विश्राम घाटके पास भारी पुलिसबलने आकर यात्राको रोकनेका प्रयास किया, किन्तु महाराजजीके आशीर्वादसे पुलिसका दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध किया गया और यात्रा श्रीकृष्ण जन्मभूमि तक निर्विघ्न पहुँचकर सम्पूर्ण हुई और

तत्कालीन शहर कोतवाल बहुगुणाजी भी यात्राको नहीं रुकवा सके।

महाराजश्री द्वारा दुर्वासा-ऋषि मन्दिरका जीर्णोद्धार

श्रीदुर्वासा ऋषि मन्दिरके महन्तने यमुनापार स्थित इस मन्दिरको महाराजजीको भेंट कर दिया था। मन्दिर अत्यन्त जीर्ण स्थितिमें था। अतः महाराजश्री द्वारा वहाँका सौन्दर्यीकरण प्रारम्भ करा दिया गया। नाना प्रकारकी बाधाएँ आयी, फिर भी मन्दिर तैयार हो गया। मन्दिर तो बन गया, किन्तु कुछ ग्रामीणोंने उसमें ठाकुरजीके विग्रहोंकी प्रतिष्ठा रोकनेके लिए सब प्रकारके हथकंडे अपनाने प्रारम्भ कर दिये। उनके कृत्योंसे क्षोभित होकर एक दिन महाराजजी मुझसे बोले कि भैया! दुर्वासा ऋषि मठके जीर्णोद्धारमें बहुत अधिक अर्थ व्यय हो चुका है, किन्तु कुछ स्थानीय लोगोंने इतना तंग कर दिया है कि वहाँ मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा नहीं हो पा रही है। अतः ऐसा विचार आ रहा है कि इस मठको अब ऐसे ही छोड़ दिया जाये। मैंने कहा कि महाराजजी वहाँ श्रीविग्रह भी स्थापित होगा और मठ भी चलेगा—आप आशीर्वाद दीजिए। फिर एक दिन मूर्ति स्थापनाका मुहूर्त निश्चित हुआ और वहाँ प्राण-प्रतिष्ठा हुई। जैसा अपेक्षित था संघर्ष भी हुआ—किन्तु अंततः सभी विरोधी महाराजजीके शरणागत हुए और अब श्रीदुर्वासा मठ द्वारा निर्विघ्नरूपसे धर्म प्रसार हो रहा है।

'श्रीकृष्ण जन्मभूमि विकास समिति' के गठनमें महाराजश्रीका ही मुख्य आशीर्वाद

अयोध्या आन्दोलनके साथ ही श्रीकृष्ण-जन्मभूमि मुक्तिका भी संकल्प दोहराया जाने लगा। अतः प्रशासन

द्वारा जन्मभूमिपर नित्य नयी बाधायें खड़ी करना प्रारम्भ कर दिया गया। वहाँ प्रतिदिनके पूजापाठके कार्यक्रमोंके सम्पादनमें व्यवधान होने लगा। अतः इन बाधाओंके निराकरणके लिए 'श्रीकृष्ण जन्मभूमि विकास समिति' का गठन हुआ, इसमें महाराजश्रीका मुख्य आशीर्वाद था।

श्रीब्रह्मकुण्डके सौन्दर्यीकरणमें महाराजश्रीका योगदान

गोवर्धनमें मानसी गंगाके निकट स्थित ब्रह्मकुण्डके सौन्दर्यीकरणका कार्य महाराजजीके द्वारा करवाया गया। बहुत बड़े स्तरपर कार्य तो हो गया, किन्तु उसमें सीवरका गंदा पानी आना नहीं रुका, क्योंकि गोवर्धन नगर पंचायत द्वारा सीवेज पम्पिंग स्टेशनका उचित संचालन नहीं होता था। मेरे द्वारा मानसी गंगा प्रदूषण मुक्तिके आदेश माननीय इलाहाबाद उच्च–न्यायालय द्वारा कराये गये। इन आदेशोंमें सम्पूर्ण गोवर्धनमें सीवर लाइनका पड़ना तथा उस गंदे पानीको इकट्ठाकर सीवेज पम्पिंग स्टेशनके माध्यमसे सीवज ट्रीटमेंट प्लांट तक ले जाना भी था।

मौनरूपमें महाराजजीके द्वारा प्रदत्त शिक्षा

ब्रह्म–कुण्डके पास सीवर लाइन पड़ जानेपर मैंने इस सम्पूर्ण योजनासे महाराजजीको अवगत कराया—तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और बोले 'एक दिन देखने चलना है'। उन दिनों महाराजजीका स्वास्थ्य कुछ खराब चल रहा था, अतः मुझे थोड़ा संकोच था। किन्तु महाराजश्री बोले कल प्रातः पाँच बजे आ जाओ गोवर्धन चलेंगे। मैं प्रातः पाँच बजकर दो मिनटपर श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ पहुँचा—वहाँ यह देखकर हतप्रभ रह गया कि महाराजश्री गाड़ीमें बैठे मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे—शायद मुझे समयसे पहुँचनेकी एक शिक्षा भी दे रहे थे। मानसी गंगा पहुँचकर महाराजजीने सम्पूर्ण योजनाके क्रियान्वयनको देखा और अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा बोले चलो अच्छा है कि मानसी गंगा और ब्रह्मकुण्डमें अब गन्दा पानी नहीं आयेगा।

महाराजश्रीके आशीर्वादसे यमुनाके घाटोंका सौन्दर्यीकरण

एक समय महाराजजी मथुरामें विश्राम घाटपर ब्रज–यात्राका संकल्प लेने पधारे। मैंने महाराजजीसे निवेदन किया कि घाटपर प्रतिवर्ष एक–दो सीढ़ी टूट रही है, अतः इसकी मरम्मतके प्रयासमें लगा हूँ। महाराजजीने आदेश दिया कि इस कार्यको तुरन्त प्रारम्भ कराओ और इसमें पाँच लाख रुपयका सहयोग मैं कराऊँगा। यह सुनकर मैं रोमाञ्चित हो गया। भविष्यमें आपके आशीर्वादसे यमुना–घाटोंके सौंदर्यीकरण हेतु करोड़ों रुपयेकी योजना स्वीकृत हो गयी और विश्राम घाटसे लेकर बंगाली घाटतक सभी घाट सुरक्षित हो गये।

संरक्षककी भाँति आत्मीय मार्गदर्शन प्रदान करनेवाले

महाराजश्री जब भी प्रवाससे मथुरा लौटते—मुझे कृपापूर्वक अवश्य बुलाते। या तो श्रीमाधव महाराजजीका फोन आता कि चतुर्वेदीजी महाराजश्री आपको याद कर रहे हैं अथवा श्रीपुरन्दर प्रभुजीको बुलानेके लिए इस सेवकके घरपर ही भेज देते। सेवामें उपस्थित होनेपर विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक गतिविधियोंकी जानकारी लेकर एक संरक्षककी भाँति उनका आत्मीय मार्गदर्शन—मेरी अमूल्य निधि होता था, साथ ही यदि किसी सेवा–कार्यका आदेश मिलता, तो वह अनुपम सौभाग्य होता कि ऐसे महापुरुष इस किङ्करको कृपावश कुछ दायित्व दे रहे हैं।

अब उनके स्नेहिल मार्गदर्शनकी सदैव प्रतीक्षा ही रहेगी।

श्रद्धानवत
गोपेश्वर नाथ चतुर्वेदी
रतन कुण्ड, मथुरा

[श्रीगोपेश्वरनाथ चतुर्वेदीजी मथुराके गणमान्य धार्मिक समाज–सेवक हैं। ये श्रीकृष्णजन्म स्थानके ट्रस्टियोंमेंसे एक हैं तथा ये विश्वहिन्दु परिषद एवं बजरंग दलके क्षेत्रीय अध्यक्ष भी हैं। इनकी साधु–सेवामें अत्यन्त रुचि है।]

वाणी-वैशिष्ट्य सम्पद्—२

(श्रील गुरुदेव और श्रील रूप गोस्वामी)

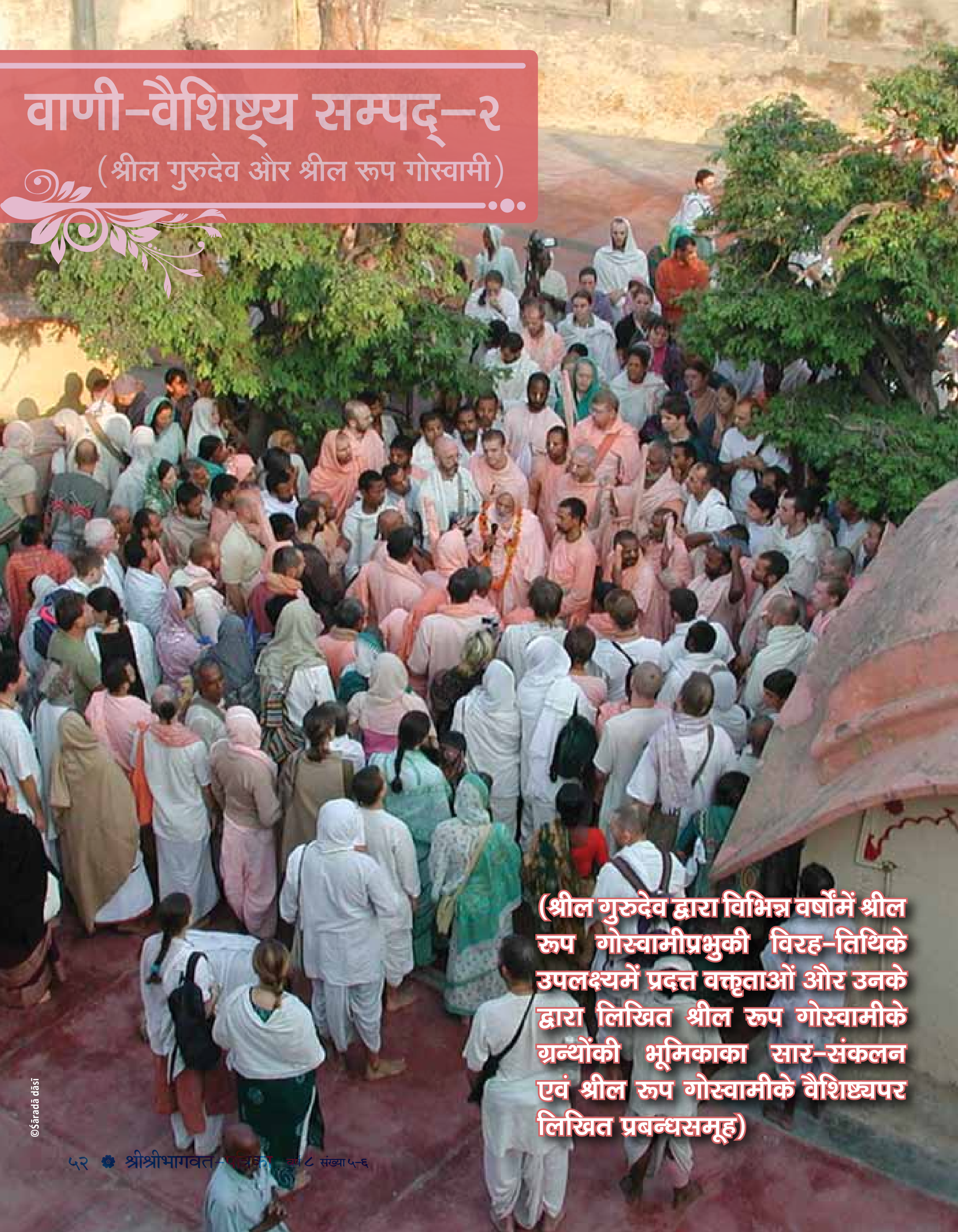

©Śāradā dāsī

(श्रील गुरुदेव द्वारा विभिन्न वर्षोंमें श्रील रूप गोस्वामीप्रभुकी विरह-तिथिके उपलक्ष्यमें प्रदत्त वक्तृताओं और उनके द्वारा लिखित श्रील रूप गोस्वामीके ग्रन्थोंकी भूमिकाका सार-संकलन एवं श्रील रूप गोस्वामीके वैशिष्ट्यपर लिखित प्रबन्धसमूह)

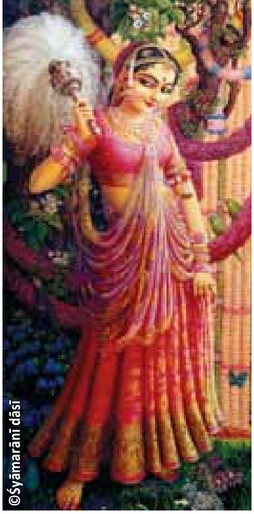

आविर्भाव

श्रील रूप गोस्वामी श्रीगौरलीलामें षड्गोस्वामियोंमेंसे अन्यतम तथा व्रजलीलामें श्रीरूप मञ्जरी हैं। इनका आविर्भाव भारद्वाज गोत्रीय यजुर्वेदीय ब्राह्मण कुलमें लगभग १४११ शकाब्द (अर्थात् १४८९ ईस्वी) में बङ्गालके मोरग्राम माधाईपुर नामक ग्राममें हुआ था। इनके पिताका नाम कुमारदेव था। इनके पूर्वज कर्णाटक देशमें वास करते थे। किसी कारणसे इनके पूर्वजोंमेंसे कोई एक अपने देशको छोड़कर बङ्गालमें आकर बस गए थे। श्रील रूप गोस्वामी इन्हींके वंशमें प्रादुर्भूत हुए। ये तीन भाई थे। बड़े भाई श्रील सनातन गोस्वामी थे और छोटे भाईका नाम अनुपम या वल्लभ था, जिनके पुत्र श्रीजीव गोस्वामी थे। बचपनसे ही इन तीनों भाइयोंकी भगवानके चरणकमलोंमें अत्यन्त अनुरक्ति थी।

उप-प्रधान मन्त्रीके पदपर नियुक्ति

विद्याध्ययन समाप्त करनेके उपरान्त युवावस्थामें ही श्रील सनातन गोस्वामी और श्रील रूप गोस्वामीकी तीक्ष्ण मेधा, उदारता और अन्यान्य समस्त गुणोंसे प्रभावित होकर बङ्गाल (गौड़देश) के तत्कालीन बादशाह हुसैन शाहने श्रील सनातन गोस्वामीको अपने प्रधानमन्त्री और श्रील रूप गोस्वामीको उप-प्रधानमन्त्रीके पदपर नियुक्त कर लिया।

श्रीचैतन्य महाप्रभुसे प्रथम भेंट

१५१४ ईस्वीमें जब श्रीचैतन्यमहाप्रभुने प्रथम बार व्रजयात्रा की थी, उसी समय मार्गमें रामकेलि ग्राममें श्रील रूप गोस्वामीकी उनसे प्रथम भेंट हुई थी। उस बार श्रीमन्महाप्रभु वहींसे ही लौटकर जगन्नाथपुरी चले गए, परन्तु उनके सत्सङ्गके प्रभावसे श्रील रूप गोस्वामीमें कृष्ण-प्राप्तिकी उत्कण्ठा इतनी अधिक प्रबल हो गयी कि अल्प समयमें ही उनका राजकार्य इत्यादि सभी कुछ छूट गया।

श्रीचैतन्य महाप्रभुसे द्वितीय बार भेंट एवं महाप्रभु द्वारा शक्ति-सञ्चार

जब श्रीचैतन्य महाप्रभुने द्वितीय बार श्रीवृन्दावनकी ओर यात्रा की, तब श्रीवृन्दावनका दर्शनकर लौटते समय प्रयागमें श्रीमन्महाप्रभुसे श्रील रूप गोस्वामीकी भेंट हुई। उस समय महाप्रभुने अपने प्रिय रूपको अत्यन्त योग्यपात्र जानकर उनके हृदयमें शक्ति-सञ्चारकर उनको भक्तिरसतत्त्वका अपूर्व विवेचन श्रवण कराया था। श्रीचैतन्य-चरितामृतमें इसका वर्णन किया गया है। यथा—

प्रभु कहे,—शुन, रूप, 'भक्तिरसेर लक्षण'।
सूत्ररूपे कहि विस्तार ना जाए वर्णन॥
पारावार-शून्य गभीर भक्तिरस-सिन्धु।
तोमाय चखाइते तार कहि एक 'बिन्दु'॥

(चै॰ च॰ म॰ १९/१३६-१३७)

अर्थात् श्रीमन्महाप्रभुने कहा—"हे प्रिय रूप! मैं तुम्हें भक्तिरसका लक्षण बतला रहा हूँ। किन्तु मैं सूत्र रूपमें ही कह रहा हूँ, क्योंकि विस्तार रूपसे इसका वर्णन करना असम्भव है। यह भक्तिरसामृतसिन्धु आर-पारशून्य और गभीर (अत्यन्त गहरा) है। मैं उसमेंसे तुम्हें एक बिन्दु ही चखा रहा हूँ।"

भक्तिरसामृत-सिन्धुकी एक बूँदकी महिमा

इस प्रकार दस दिनों तक प्रयागमें रहकर श्रीमन्महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीके समक्ष भक्तिरसतत्त्वका अपूर्व वर्णन किया। श्रील रूप गोस्वामीने अपने भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि, ललितमाधव, विदग्धमाधव आदि ग्रन्थोंमें श्रीमन्महाप्रभुसे श्रवण किए गए भक्तिरसतत्त्वका ही विवेचन किया है। श्रीमन् महाप्रभु द्वारा प्रदत्त भक्तिरसामृत सिन्धुकी एक बूँदका पानकर श्रील रूप गोस्वामीने जिन

ग्रन्थोंको प्रकाशित किया, वे समस्त ग्रन्थ जगत्‌को प्रेमकी बाढ़में डुबानेमें समर्थ हैं।

नित्यसिद्ध परिकर

जिस प्रकार सूर्यके उदित होनेके साथ–साथ सूर्यकी शक्ति–स्वरूप उसकी किरणें भी प्रकाशित होती हैं, उसी प्रकार यद्यपि श्रील रूप गोस्वामी श्रीमन्महाप्रभुके साथ ही उनके नित्य–परिकरके रूपमें आए थे, तथापि श्रील रूप गोस्वामीने जगत्‌के जीवोंको शिक्षा देनेके लिए साधकोचित आचरण किया है। वास्तवमें वे श्रीमन्महाप्रभुके नित्य–सिद्ध–परिकर हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा श्रील रूप गोस्वामीमें सर्वशक्ति–सञ्चार करनेका कारण

यद्यपि श्रीचैतन्य चरितामृतमें श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने ऐसा वर्णन किया है कि श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीमें अपनी समस्त शक्तिका संचार किया, तथापि 'गुरुके द्वारा शक्तिका संचार नहीं किये जानेपर कभी भी भक्तिकी प्राप्ति नहीं हो सकती'—इसी विचारको दिखलानेके लिये अर्थात् लोक–शिक्षाके उद्देश्यसे ही श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने ऐसा कहा है, अन्यथा श्रील रूप गोस्वामी तो श्रीरूप मञ्जरी हैं तथा उनमें नित्यकालसे ही श्रीराधाजीकी शक्ति सञ्चरित है।

'आदिकवि'

श्रीमन्महाप्रभुकी धारामें गौड़ीय–गुरुवर्गने श्रीमद्भागवतके **'जन्माद्यस्य'** (श्रीमद्भा० १/१/१) श्लोकके **'तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये'** में वर्णित 'तेने' शब्दका अर्थ अखिलरसामृतसिन्धु श्रीकृष्ण और महाभाव स्वरूपा श्रीमती राधिकाके मिलित स्वरूप शृङ्गार–रसके उद्गम स्रोत श्रीचैतन्य महाप्रभु; 'ब्रह्म हृदा य' पदका अर्थ हृदयमें रसब्रह्मको; तथा 'आदिकवये' का अर्थ आदिकवि श्रील रूप गोस्वामी किया है। दूसरे शब्दोंमें 'आदि' अर्थात् शृङ्गार–रसके पोषक श्रीश्रीराधाकृष्णने ही श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें आदिकवि श्रील रूप गोस्वामीके हृदयमें रसब्रह्मको प्रकाशित किया। श्रीचैतन्य महाप्रभुकी इसी प्रेरणासे अनुप्राणित होकर तथा उनके मनोऽभीष्टको जानकर परवर्तीकालमें श्रील रूप गोस्वामीने भक्तिरसामृतसिन्धु एवं उज्ज्वलनीलमणि इत्यादि ग्रन्थोंमें इस आदि–रसका विस्तृतरूपमें वर्णन किया।

श्रीचैतन्य महाप्रभुका आदेश

श्रीचैतन्यमहाप्रभुके प्रति विलक्षण अनुरागके कारण श्रील रूप गोस्वामीका गृहत्याग, दैन्य, विषयोंके प्रति वैराग्य इत्यादि सर्वत्र ही प्रसिद्ध है। श्रीचैतन्यचरितामृत, भक्तमाल आदि ग्रन्थोंमें श्रील रूप गोस्वामीकी जीवनीका विस्तारपूर्वक वर्णन है। श्रील नरोत्तम ठाकुर महाशयने यथार्थतः श्रील रूप गोस्वामीको 'श्रीचैतन्यमनोऽभीष्ट–संस्थापक' की उपाधि दी है। श्रीव्रजमण्डलके लुप्त तीर्थोंका उद्धार और भक्तिशास्त्रोंका प्रणयन एवं प्रचार—इन दो कार्योंके लिए श्रीचैतन्यमहाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीको विशेष आदेश दिया था।

व्रजवासमें ग्रन्थ-प्रणयनकी अभिलाषाका उदित होना

यद्यपि जगतमें बहुतसे महान आचार्य हुए हैं, तथापि श्रील रूप गोस्वामीको एक ऐसे अपूर्व आचार्यके रूपमें जाना जाता है, जिन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको जगतमें स्थापित कर जीवोंका परम कल्याण साधित किया है।

जब श्रीमन्महाप्रभुकी इच्छानुसार श्रील रूप गोस्वामी कुछ समयके लिये श्रीवृन्दावन आये, तब उन्होंने सोचा कि "श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको पूर्ण करनेके लिए मैं एक नाटककी रचना करूँगा। इस नाटकमें मैं श्रीमती राधिका और श्रीकृष्णकी सम्भोग और विप्रलम्भ लीलाओंके सौन्दर्यको प्रकाशित करूँगा। मैं विवेचना करूँगा कि किस प्रकार अपने प्रकाश द्वारा श्रीमती राधिका और व्रजकी सभी सखियाँ द्वारका गयीं और श्रीकृष्णकी १६,१०८ महीषियाँ बनीं। इसके द्वारा तत्कालीन और भावी भक्तोंके माथुर–विरहको प्रशमित करूँगा।" इस प्रकार श्रील रूप गोस्वामीने श्रीवृन्दावनमें ही अपने नाटक–ग्रन्थके मङ्गलाचरण श्लोककी रचना की।

श्रीसत्यभामा देवी एवं श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा नाटक-ग्रन्थोंके प्रणयनका मार्गदर्शन

एक मास तक श्रीवृन्दावनमें रहनेके उपरान्त गौड़देश (बङ्गाल) की ओर जाते समय श्रील रूप गोस्वामीने नाटक–ग्रन्थकी विषय–वस्तुकी चिन्ता करते–करते तथा बीच–बीचमें सूत्ररूपमें कुछ लिखते हुए नाटककी पाण्डुलिपि प्रस्तुत की। बङ्गालमें अपने घर लौटकर धन–सम्पत्ति तथा जीव गोस्वामीकी विद्याध्ययन आदिकी व्यवस्था करके वे पुनः नीलाचलमें श्रीमन्महाप्रभुके निकट वास करनेके लिये चल पड़े। यद्यपि श्रील रूप गोस्वामी व्रजलीला और पुरलीलाको एक ही नाटक–ग्रन्थमें

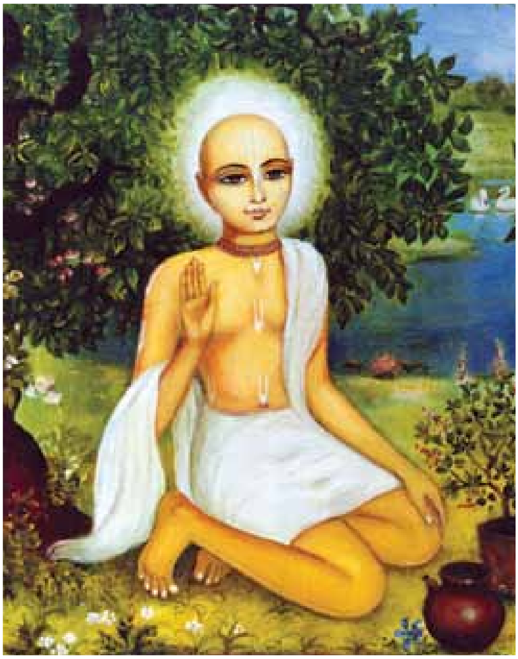

रचनाकर भक्तोंके माथुर–विरहको प्रशमन करनेकी इच्छा कर रहे थे, किन्तु जब वे उड़ीसाके सत्यभामापुर स्थानमें पहुँचे, तो श्रीसत्यभामादेवीने उन्हें स्वप्नमें आकर आदेश दिया—"व्रजलीला और पुरलीलाका एक ही साथ एक ही ग्रन्थमें वर्णन मत करना। इसे दो भागोंमें विभक्त करना।" जब श्रील रूप गोस्वामी श्रीजगन्नाथ पुरी पहुँचे तो श्रीचैतन्य महाप्रभुने भी श्रीसत्यभामादेवीके वचनोंकी पुष्टि की।

श्रीमन्महाप्रभुने उन्हें कहा—'श्रीकृष्णको वृन्दावनसे बाहर मत ले जाना। श्रीकृष्ण व्रजको त्यागकर कहीं नहीं जाते।'

कृष्णोऽन्यो यदुसम्भूतो यः पूर्णः सोऽस्त्यतः परः।
वृन्दावनं परित्यज्य स क्वचिन नैव गच्छति॥

(लघुभागवतामृत पूर्वखण्ड २३७ यामलवचन)

अर्थात् यद्यपि स्वयं–भगवान् नन्दनन्दन श्रीकृष्ण यदुकुलमें अवतीर्ण वसुदेवनन्दन श्रीकृष्णसे स्वरूपतः अभिन्न हैं, तथापि स्वयंरूप व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण वृन्दावन परित्यागकर अन्य किसी भी स्थानपर नहीं जाते।

विदग्ध–माधव एवं ललित–माधवमें वर्णित विषय–वस्तु

श्रील रूप गोस्वामीने ऐसे आदेशको प्राप्त करके अपने नाटकको दो भागोंमें विभक्त किया। उनके द्वारा रचित नाटक–ग्रन्थके प्रथम–भाग विदग्ध–माधवमें श्रीकृष्णकी वृन्दावनकी लीलाएँ हैं तथा द्वितीय–भाग ललित–माधवमें श्रीकृष्णका द्वारका गमन और वृन्दावनकी सभी गोपियोंका उनसे द्वारकाकी महीषियोंके रूपमें पुनः मिलन दिखलाया गया है।

भक्तों सहित श्रीमन्महाप्रभुका श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित श्लोकोंका श्रवण एवं आस्वादन

श्रील रूप गोस्वामीके श्रीजगन्नाथ पुरीमें वास कालके समय किसी एक दिन जब श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामी, श्रीराय रामानन्द तथा श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य आदि भक्तोंके साथ श्रील हरिदास ठाकुरके वासस्थानपर उपस्थित हुए, तब प्रसङ्गवशतः श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामीने कहा कि रूप प्रभुने विदग्ध–माधव तथा ललित–माधव नामक नाटक–ग्रन्थोंकी रचना की है। श्रीस्वरूप दामोदर गोस्वामीके मुखसे ऐसा सुनकर श्रीराय

रामानन्दने श्रीरूप गोस्वामीसे कहा कि हमें सर्वप्रथम विदग्ध–माधवके मङ्गलाचरण श्लोकका श्रवण कराओ।

मङ्गलाचरण श्लोकका श्रवण करनेके बाद श्रीरायरामानन्द प्रभुने श्रील रूप गोस्वामीसे कहा कि ग्रन्थमें वर्णित अपने इष्टदेवके विषयमें भी कुछ बतलाओ। तब श्रील रूप गोस्वामीने स्वरचित 'अनर्पितचरीं चिरात्' श्लोकका उच्चारण किया।

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयाऽवतीर्णः कलौ
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम्।
हरिः पुरटसुन्दरद्युतिकदम्बसन्दीपितः
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः श्रीशचीनन्दनः॥

(विदग्ध–माधव मङ्गलाचरण २)

अर्थात् जिस सर्वोच्च उज्ज्वल–प्रेमरसका दान जगतको चिर काल तक नहीं दिया, अपनी उसी निगूढ़ भक्ति–सम्पत्तिकी 'श्री' का दान करनेके लिए जो परम करुणापूर्वक कलियुगमें अवतीर्ण हुए हैं, सुवर्णकान्तिसमूह (श्रीमती राधिकाकी अङ्गकान्ति) द्वारा देदीप्यमान वही श्रीशचीनन्दन सदा आप लोगोंके हृदयमें स्फूर्ति प्राप्त करें।

श्रील रूप गोस्वामीके मुखसे इस श्लोकको सुनकर हृदयमें सन्तुष्ट होनेपर भी श्रीमन्महाप्रभुने बाहरमें कुछ रोष प्रकट करते हुए कहा—'यह अतिस्तुति है।' किन्तु सभी भक्तोंने कहा कि श्रीरूप प्रभुने यह श्लोक सुनाकर हम सबको कृतार्थ कर दिया है। श्रीरायरामानन्द प्रभुने श्रील रूप गोस्वामीकी अत्यधिक प्रशंसा करते हुए कहा—'तुम्हारी रचना तो अमृतकी धाराके समान है।' श्रीरायरामानन्द प्रभुने पुनः कहा—'अब तुम हमें स्वरचित ललित–माधवके मङ्गलाचरण श्लोकका श्रवण कराओ।' श्रील रूप गोस्वामीने एक श्लोकका उच्चारण किया जिसके द्वारा उन्होंने श्रीमती राधारानीके प्रणयरस–सुधाका विस्तार करनेवालेके रूपमें शचीनन्दन श्रीगौरहरिका वर्णन किया।

श्रीरायरामानन्द प्रभुने श्रील रूप गोस्वामीकी अत्यधिक प्रशंसा करते हुए कहा—'तुम्हारी रचना तो अमृतकी धाराके समान है।'

भक्तगोष्ठीमें श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रील रूप गोस्वामीकी रचनाओंको सुनकर कितने आनन्दित हुए, यह एकमात्र रसिकजन ही जानते है। श्रील रूप गोस्वामीमें अपनी सर्वशक्तिका सञ्चारकर श्रीमन्महाप्रभुने उन्हें आचार्यपदपर नियुक्तकर श्रीवृन्दावनमें भेजा और अपने मनोऽभीष्टको पूर्ण करवाया। इसलिए श्रील नरोत्तम ठाकुर महाशयने लिखा है—

श्रीचैतन्य मनोऽभीष्टं स्थापितं येन भूतले।
स्वयं रूपः कदा मह्यं ददाति स्वपदान्तिकम्॥

(प्रेमभक्तिचन्द्रिका मङ्गलाचरण २)

अर्थात् जिन्होंने धरातलपर श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टकी स्थापना की है, वे श्रील रूप गोस्वामी कब मुझे अपने चरणकमलोंमें स्थान प्रदान करेंगे?

श्रीमन्महाप्रभुके स्वरूपको प्रकाशित करना

श्रीचैतन्यमहाप्रभुके स्वरूपको किसने प्रकाशित किया? श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य और श्रीराय रामानन्द आदि सभी जानते तो थे, किन्तु जब श्रीराय रामानन्द प्रभु श्रीमन्महाप्रभुके स्वरूपका वर्णन करने लगे, तो महाप्रभुने उनका मुख ढक दिया। एकमात्र श्रील रूप गोस्वामीपाद उनके स्वरूपको पूर्ण रूपसे वर्णन कर सके। यद्यपि श्रीमन्महाप्रभुने

सभीको रोक दिया, किन्तु वे श्रील रूप गोस्वामीको नहीं रोक सके, क्योंकि उन्होंने स्वयं ही श्रील रूप गोस्वामीको अपने स्वरूपको प्रकाश करनेवालेके रूपमें निर्वाचित किया था। श्रीमन्महाप्रभुने उन्हें इस जगत्‌में श्रीमती राधिकाकी सेवाको वितरण करनेके लिए भी निर्वाचित किया था।

श्रीमन्महाप्रभु द्वारा सभी भक्तोंसे श्रील रूप गोस्वामीपर कृपा करनेके अनुरोधका कारण

श्रील रूप गोस्वामीके रस–तत्त्वमें इतने अधिक प्रवेशको देखकर श्रीचैतन्य महाप्रभुने सोचा 'यह मेरी आन्तरिक भावनाओं—मेरे मनोऽभीष्टका प्रचार करनेमें सक्षम है।' श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीस्वरूप दामोदर और श्रीरामानन्द राय आदि भक्तोंको श्रील रूप गोस्वामीपर कृपा करनेके लिए कहा, जिससे कि उन सब भक्तोंकी कृपासे श्रील रूप गोस्वामी शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य तथा माधुर्य सभी रसोंको जगत्‌में प्रकाशित कर सकें। यद्यपि श्रील रूप गोस्वामी इन पाँचों रसोंको देनेमें समर्थ हैं, किन्तु यदि कोई माधुर्य–रसके लिये श्रील रूप गोस्वामीका आश्रय ग्रहण करे, तो वही सर्वश्रेष्ठ है। श्रील रूप गोस्वामीने बहुतसे अपूर्व और विशेष ग्रन्थ प्रणयन किये, जिससे यह प्रथम बार ज्ञात हुआ कि श्रीमन्महाप्रभु इस जगतको क्या देनेके लिए आये थे अर्थात् महाप्रभुका मनोऽभीष्ट क्या था?

ललित–माधव और विदग्ध–माधव नाटक–ग्रन्थोंकी रचनाका उद्देश्य

श्रील रूप गोस्वामी अपने हृदयमें श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु नामक ग्रन्थके माध्यमसे शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, तथा संक्षेपमें मधुर–रस आदि सभी रसोंकी विवेचना करके उज्जवलनीलमणि नामक ग्रन्थके माध्यमसे उसमें मुख्य रूपसे मधुर–रसका विवेचन करनेकी इच्छाका पोषण कर रहे थे। किन्तु जब उन्हें इन रस–ग्रन्थोंमें उदाहरण देनेके लिए कोई शास्त्र नहीं मिला, तो उन्होंने स्वयं ही 'ललित–माधव' तथा 'विदग्ध–माधव' नामक ग्रन्थोंकी रचना करके उससे उदाहरणोंके अर्थात् प्रमाणोंके अभावको पूर्ण किया, क्योंकि उन भावोंके सम्बन्धमें अन्य किसी भी शास्त्रमें वर्णन उपलब्ध ही नहीं है।

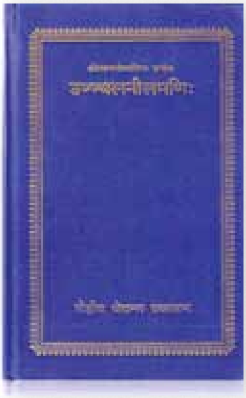

उन्होंने द्वारका लीलाकी महीषियोंके विषयमें बतलाया कि वे व्रजकी किशोरी गोपियोंका प्रकाश हैं, अंश हैं और व्रजगोपियाँ अंशनी हैं।

श्रील कवि कर्णपूर द्वारा केवल मिलन और श्रील रूप गोस्वामी द्वारा मिलन तथा विरहके वर्णन करनेका कारण

श्रील कवि कर्णपूर श्रीमन्महाप्रभुके निज परिकरोंमेंसे एक हैं तथा उन्होंने श्रीआनन्दवृन्दावन–चम्पू नामक

ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थमें उन्होंने श्रीकृष्णके जन्मसे लेकर रासलीला और श्रीश्रीराधाकृष्णकी झूलनलीला तक की लीलाओंका वर्णन किया है। उन्होंने अपने इस ग्रन्थमें श्रीकृष्णके मथुरा और द्वारका जानेकी लीलाओंका वर्णन नहीं किया, क्योंकि शुद्ध–भक्तोंके लिए विप्रलम्भ–भावको सहन कर पाना बहुत कठिन है। उन्होंने सोचा 'मेरी स्वामिनी राधिका इस विरहको सहन नहीं कर सकती हैं, इसलिए मैं इस विषयमें नहीं लिखूँगा।'

किन्तु श्रील रूप गोस्वामीने सम्भोग और विरह—दोनोंके सम्बन्धमें लिखा है, क्योंकि यह विरह एक अत्यन्त गूढ़ एवं अलौकिक भाव है। यद्यपि मिलनके समय श्रीराधाजी और श्रीकृष्ण एक साथ होते हैं, तथापि उनके हृदयमें कुछ अभाव रहता है। दूसरी ओर, विरहके समय उनका नव–नवायमान रूपसे पूर्ण मिलन होता है। यह केवल आन्तरिक रूपसे ही नहीं होता, अपितु कभी–कभी बाह्य रूपसे भी स्फुरित होता है।

विप्रलम्भ–भावके बिना सम्भोग–भाव पुष्ट और वर्धित नहीं होता। विप्रलम्भात्मक लीलाएँ इसलिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे सम्भोगके माधुर्यकी पुष्टि करती हैं।

विप्रलम्भके बिना सम्भोग पुष्ट नहीं होता

श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको जगतमें स्थापित करनेकी इच्छासे श्रील रूप गोस्वामीने विप्रलम्भ–भावकी महिमाका वर्णन किया है। यद्यपि यह विप्रलम्भ–भाव बहुत श्रेष्ठ है, किन्तु इसमें मिलनमें अनुभव होनेवाले कई अलौकिक लक्षण विद्यमान नहीं हैं, अतएव यह विरह हमारे जीवनका साध्य नहीं है। कोई भी व्रजवासी, कोई भी गौड़ीय–वैष्णव नहीं चाहता कि श्रीश्रीराधाकृष्णका नित्य–विरह हो। कौन ऐसा चाह भी सकता है? तथापि श्रीरूप गोस्वामीने इस विप्रलम्भ भावका श्रीउज्ज्वलनीलमणि (१५/३)में विवेचन करते हुए कहा है—**'न विना विप्रलम्भेन सम्भोगः पुष्टिमश्नुते'** अर्थात् इस विप्रलम्भ–भावके बिना सम्भोग–भाव पुष्ट और वर्धित नहीं होता। विप्रलम्भात्मक लीलाएँ इसलिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे सम्भोगके माधुर्यकी पुष्टि करती हैं।

सद्गुरु और वैष्णवोंके आनुगत्यमें ही श्रील रूप गोस्वामीके आविर्भाव और उनकी ग्रन्थ–प्रणयन आदि सेवाओंको समझना सम्भवपर

उपरोक्त सिद्धान्त अत्यन्त गूढ़ और दुष्कर हैं। अतएव यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम सर्वदा सद्गुरु और वैष्णवोंके आनुगत्यमें रहें और अपना सम्पूर्ण समय और शक्ति सद्गुरुकी सेवा, हरिनाम–कीर्तन और भजनमें लगायें। हमें यत्नपूर्वक श्रील रूप गोस्वामीके आविर्भाव और उनके द्वारा श्रीविदग्ध–माधव, श्रीललित–माधव इत्यादि विभिन्न ग्रन्थोंके प्रणयनके कारणको समझना और अनुभव करना

©Vasanti & Anitā dāsī

चाहिये। यदि हम श्रीगुरुके चरणकमलोंका आश्रय लेकर श्रील रूप गोस्वामीके निकट जाने की और यत्नपूर्वक इन विषयोंको समझनेकी चेष्टा नहीं करेंगे, तो कुछ समयके उपरान्त हम पुनः लौकिक क्रियाओंमें निमग्न हो जायेंगे।

श्रीमन्महाप्रभुके निकट वास, उनका कृपादेश प्राप्त तथा पुनः श्रीवृन्दावन आगमन

चातुर्मास्यके समाप्त होनेपर गौड़देशसे आये समस्त भक्त गौड़देशको लौट गये, किन्तु श्रील रूप गोस्वामी श्रीचैतन्य महाप्रभुके साथ नीलाचलमें ही रह गये तथा उन्होंने श्रीमन्महाप्रभुके साथ आनन्दपूर्वक दोलयात्रा (होली) इत्यादि उत्सव देखे। दोलयात्राके उपरान्त श्रीमन्महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीके प्रति अत्यधिक कृपापूर्वक्ञ उनमें शक्तिका सञ्चार किया तथा कहा कि "तुम वृन्दावन जाओ, वृन्दावनमें ही रहना तथा एक बार सनातनको भी यहाँ भेजना। व्रजमें जाकर रस–शास्त्रोंका निरूपण करना तथा वहाँके लुप्त–तीर्थोंको प्रकाशित करके उनकी महिमाका प्रचार करना। कृष्णसेवा अर्थात् श्रीविग्रह और मन्दिरमें सेवाकी स्थापना तथा अप्राकृत–भक्ति–रसका प्रचार करना। यह देखनेके लिये कि तुमने श्रीवृन्दावनमें क्या–क्या किया है, मैं वहाँ एकबार अवश्य आऊँगा।" इतना कहकर श्रीमन्महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीको आलिङ्गन किया तथा उनके सिरपर अपने चरण रख दिये। श्रीमन्महाप्रभुके भक्तोंसे विदायी लेकर श्रील रूप गोस्वामी पुनः गौड़देश होते हुए श्रीधाम वृन्दावनमें आ पहुँचे।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित ग्रन्थावली

श्रीमन्महाप्रभुकी कृपा एवं आदेशसे व्रजमें वास करते हुए श्रील रूप गोस्वामीने जिन ग्रन्थोंका प्रणयन किया, वे इस प्रकार हैं—श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्लनीलमणि, लघुभागवतामृतम्, विदग्धमाधव, ललितमाधव, निकुञ्जरहस्यस्तव, स्तवमाला, श्रीराधाकृष्ण–गणोद्देशदीपिका, मथुरा–माहात्म्य, पद्यावली, उद्धवसन्देश, हंसदूत, दानकेलिकौमुदी, कृष्णजन्मतिथि विधि, प्रयुक्ताख्यात् मञ्जरी, नाटकचन्द्रिका इत्यादि।

उज्ज्वलनीलमणि तथा श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु–गौड़ीय–वैष्णव रसशास्त्रके वेद

श्रील रूप गोस्वामी विरचित उज्ज्वलनीलमणि ग्रन्थ अखिल–रसामृतमूर्त्ति श्रीकृष्णके उन्नत–उज्ज्वल

या मधुररस–विज्ञानका शास्त्र है। वास्तवमें यह ग्रन्थ श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु ग्रन्थका ही उत्तर–अंश है तथा गोपी–भजनके विषयमें विस्तृत एवं परिपूर्ण है। प्रेमरसमय श्रीगोविन्दका भजन करनेके लिए व्रजरमणियोंका आनुगत्य अत्यन्त आवश्यक एवं आदरणीय है। उनके आनुगत्यमें

आदर–सौहार्द और माधुर्य सहित प्रवेश करना होता है। गोपियोंका प्रेमानुराग या प्रेममाधुरी इस जगतमें सुदुर्लभ होनेपर भी तथा उनकी प्रीतिका विषय भाषामें प्रस्फुटित न होनेपर भी श्रील रूप गोस्वामीने उसी उन्नत–उज्ज्वल व्रजरसको प्रकाशित किया है—हम लोग उस व्रजरसका बिन्दुमात्र आस्वादन करनेसे ही चरितार्थ हो सकते हैं। करुणावरुणालय श्रीगौरसुन्दरने हम जैसे नारकीय जीवोंके लिए श्रील रूप गोस्वामीकी लेखनीके अग्रभागमें यह अतुलनीय एवं अमूल्य सुधाभण्डार निहित किया है। उस पीयूष–समुद्रके कणमात्रका भी आस्वादन करनेपर हम त्रितापज्वालासे अवश्य ही छुटकारा पा सकते हैं।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित उज्ज्वलनीलमणि तथा भक्तिरसामृतसिन्धुको गौड़ीय–वैष्णव–रसशास्त्रका वेद कहनेमें भी अत्युक्ति नहीं होगी।

श्रीकृष्णप्राप्तिके लिए गोपियोंके हृदयमें तीव्र–वेग और प्रबल आकर्षण इस ग्रन्थके पत्र–पत्रमें सुस्पष्ट भावसे अङ्कित है। श्रीकृष्णदर्शनकी लालसाने उनके हृदयमें अनुराग–स्रोतको किस प्रकारसे सशक्त उत्ताल तरङ्गोंके रूपमें उच्छ्वलित किया है, इस ग्रन्थमें उसकी समुज्ज्वल प्रतिच्छवि विशद् भावसे चित्रित हुई है। उन्नतोज्ज्वल रसगर्भ–प्रेमभक्तिका ऐसा समुज्ज्वल, सुमधुर उपदेश जगतके और किसी भी ग्रन्थमें देखा या सुना नहीं जाता। वस्तुतः श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित उज्ज्वलनीलमणि तथा भक्तिरसामृतसिन्धुको गौड़ीय–वैष्णव–रसशास्त्रका वेद कहनेमें भी अत्युक्ति नहीं होगी।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा पारकीय–भावकी प्रमाणिकता स्थापन

श्रील रूप गोस्वामीने श्रीचैतन्य महाप्रभुके वास्तविक विचारों अर्थात् मनोऽभीष्टको ग्रन्थोंके माध्यमसे स्थापित किया है। उन्होंने मुख्यतः श्रीमद्भागवतम्को प्रमाणके रूपमें स्वीकार करते हुए यह स्थापित किया है कि पारकीय–भाव केवल प्रामाणिक ही नहीं, बल्कि वह सर्वश्रेष्ठ प्रकारकी भक्ति है। उन्होंने इस विचारको इतने सूक्ष्म एवं अपूर्व रूपसे इस प्रकारसे स्थापित किया कि जिससे दूसरे–दूसरे सम्प्रदायोंके लोग नतमस्तक होकर उसे स्वीकार करनेके लिए बाध्य हुए।

उन्होंने जगत्को यह दिखलाया कि किस प्रकार हम श्रीराधाकृष्णकी विशुद्ध–भक्तिके प्रति आकर्षित हो सकते

हैं। उन्होंने श्रीश्रीराधाकृष्ण और श्रीचैतन्यमहाप्रभुके यथार्थ स्वरूपका भी प्रकाश किया है।

व्रजरसमें प्रवेश करनेकी विधि

व्रजरसकी प्राप्तिके लिये श्रीकृष्णके प्रति लौकिक सद्‌बन्धुवत भाव उदित होना अति आवश्यक है। यह लौकिक सद्‌बन्धुवत भाव व्रजरसमें प्रवेश हेतु एक प्रहरीकी भाँति है, अतः इस प्रहरीकी कृपाके बिना अर्थात् इस भावको प्राप्त किये बिना हम व्रजरसमें प्रवेश नहीं कर सकते। जब तक श्रीकृष्ण एवं व्रजवासियोंके प्रति लौकिक सद्‌बन्धुका भाव उदित नहीं होगा, हम व्रजरसमें कदापि प्रवेश नहीं कर सकते। श्रील रूप गोस्वामीने इसका बहुत सुन्दर रूपसे विवेचन करके दिखलाया है। उन्होंने स्वरचितग्रन्थ उत्कलिकावल्लरीमें एक स्थानपर नहीं, बल्कि प्रारम्भसे लेकर अन्त तक इसी सद्‌बन्धुवत भावका ही वर्णन किया है। निकुञ्ज–रहस्य–स्तवमें भी इसे देखा जा सकता है।

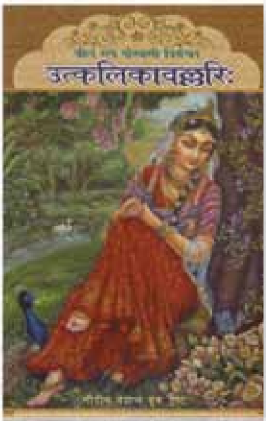

अप्राकृत कवि–श्रील रूप गोस्वामी

श्रील रूप गोस्वामीके श्लोकोंकी झंकार कोयलके कूजन एवं भौरेंके गुञ्जनको भी मात देती है, क्योंकि उनके कवित्वमें अप्राकृत–रसकी धारा निकलती है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा अनर्थोंसे मुक्ति प्राप्त करनेके मार्गका निरूपण

श्रील रूप गोस्वामी श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा जगतको दिए गए स्वभक्ति 'श्री'–प्रेमके मूर्तिमान विग्रह हैं। अतः श्रील रूप गोस्वामीने किस प्रकार उस प्रेमका जगतमें वितरण किया है? सर्वप्रथम, उन्होंने श्रीउपदेशामृतमें जीवोंको अनर्थोंसे मुक्ति प्राप्त करनेका मार्ग बतलाया है। श्रीरूपानुग–गौड़ीय–वैष्णव–सम्प्रदायमें 'श्रीउपदेशामृत' का बहुत समादर है। श्रील रूप गोस्वामीने 'अनर्पितचिर उन्नतोज्ज्वल श्रीकृष्ण–प्रेम–प्रदाता' श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके उपदेश–सिन्धुका मन्थन करके सार–स्वरूप 'उपदेशामृत' का प्रणयन जीवमात्रके कल्याणके लिए किया है। भक्ति–साधकोंके लिए उपदेशामृतके उपदेश–समूह अपरिहार्य हैं। इन उपदेशोंका पालन किये बिना विमल–भक्ति–राज्यमें, विशेषतः दुर्ज्ञेय रागानुग–भक्तिमार्गमें प्रवेश पाना कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित 'उपदेशामृत'–श्रीमन्महाप्रभुकी ही वाणी

प्रेमावतारी श्रीचैतन्य महाप्रभुके निकटतम प्रिय–सेवक श्रीगोविन्द द्वारा लिखित कड़चों (श्लोकों) से ज्ञात होता है कि श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने अप्रकट–लीलाविष्कारसे पूर्व सब समय सुदीप्त विप्रलम्भ–भावमें विभोर रहा करते थे। उस समय उनके अन्तरङ्ग परिकर श्रीस्वरूप दामोदर और श्रीराय रामानन्द श्रीमन्महाप्रभुके भावानुरूप कृष्ण–कथाओं और पदावलियोंसे उनको सान्त्वना देनेका प्रयास करते थे। उन्हीं दिनों एक बार श्रीमन्महाप्रभु अपने परिकरोंके साथ समुद्र तटपर बैठे हुए कृष्ण–कथामें संलग्न थे। नीलसमुद्र उपकूलवर्ती सघन वृक्षावली तथा ऊँचे बालूके टीलेको देखकर हठात् उन्हें व्रजस्थित यमुना, यमुनाके तटवर्ती सुन्दर उपवनों, कुञ्जों एवं गिरि–गोवर्धनकी स्फूर्ति हो

आयी। फिर तो वे कृष्ण–विरहमें कातर होकर बहुत अधिक क्रन्दन करने लगे। कुछ समय उपरान्त आवेश शान्त होनेपर श्रीमन्महाप्रभुने उपस्थित भक्त–समुदायमें मन्द–मन्द मधुर–वाणीसे जो उपदेश दिये थे, श्रील रूप गोस्वामीने उन्हें उसी समय श्लोकाकारमें लिपिबद्ध कर लिया। उन एकादश श्लोकोंका एक मालाके रूपमें गुम्फन ही 'उपदेशामृत' है।

भक्तिराज्यमें प्रवेश करनेके इच्छुक साधकोंके लिये श्रील रूप गोस्वामीके उपदेश

भक्तिराज्यमें प्रवेश करनेके इच्छुक साधकोंको प्रारम्भमें भक्ति–प्रतिकूल क्रिया–कलापों अर्थात् वाणी, मन, क्रोध, जिह्वा, उदर और उपस्थ (जननेन्द्रिय)—इन छः वेगों; तथा अधिक आहार (संग्रह), वृथा प्रयास, वृथा ग्राम्य–आलाप, नियमाग्रह, कुसंग और लौल्य (असत् मतोंके ग्रहण करनेकी चंचलता) आदि दोषोंका परित्याग करना अति आवश्यक है। साथ ही भक्ति–पोषक विधियोंका पालन अर्थात् उत्साह, निश्चय, धैर्य, भक्ति सदाचार और भक्तोंकी वृत्तिको ग्रहण करना भी परमावश्यक है। इस प्रकार भक्तिमार्गमें कुछ दूर अग्रसर होनेपर छः प्रकारका सत्संग, त्रिविध भक्तोंका समादर और उनकी सेवाशुश्रूषा भी होनी चाहिए। अन्तमें कायिक और मानसिक रूपमें व्रजमण्डलमें निवास करते हुए व्रजरस–रसिक कृष्णानुरागीजनोंके आनुगत्यमें निरन्तर श्रीकृष्णनाम–रूप–गुण–लीलाकथाके कीर्तन और स्मरणमें क्रमशः अपनी जिह्वा और मनको नियुक्त करना चाहिए। श्रीमती राधिका श्रीकृष्णको सर्वाधिक प्रिय हैं, श्रीमती राधाजीका कुण्ड भी उसी प्रकार ही श्रीकृष्णको सर्वाधिक प्रिय है। इसलिए रागानुगा भक्ति–साधकोंको श्रीकृष्णकी सर्वाधिक प्रिय महाभाव–स्वरूपा श्रीमती राधिकाजी एवं श्रीराधाकुण्डका अवश्य ही आश्रय ग्रहण करना चाहिए। श्रीचैतन्य महाप्रभुके इन सर्वोत्तम उपदेशोंका सार उपदेशामृतके श्लोकोंमें पूर्णरूपसे संरक्षित है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा भक्तिके सोपानोंकी परिभाषा

श्रील रूप गोस्वामीने स्वरचित श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु नामक ग्रन्थमें भक्तिके सभी सोपानों—श्रद्धा, अनर्थ निवृत्ति, रुचि, साधन, भाव, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव, मोहन, मोदन और मदन इत्यादिकी अति सुन्दर एवं अपूर्व परिभाषाएँ प्रदान की हैं।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा प्रदत्त भक्तिकी परिभाषा ही सम्पूर्ण

श्रील रूप गोस्वामीने 'अन्याभिलाषिता शून्यम्' श्लोकमें भक्तिकी जैसी परिभाषा दी है, अन्य किसी भी वैष्णव—आचार्यने भक्तिकी इतनी सुन्दर एवं पूर्ण परिभाषा नहीं दी है। श्रील रूप गोस्वामी द्वारा 'अन्याभिलाषिता शून्यम्' श्लोक रचनासे पहले—**'सा परानुरक्तिरीश्वरे** (शाण्डिल्य—भक्तिसूत्र १/२) अर्थात् ईश्वरमें परानुरक्ति ही भक्ति है' और **'सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं तत्परत्वेन निर्मलम्। हृषिकेण हृषीकेश—सेवनं भक्तिरुच्यते** (भ॰र॰सि॰ पूर्व १/१० नारद पञ्चरात्र) अर्थात् अप्राकृत इन्द्रियों द्वारा अप्राकृत इन्द्रियाधिपति श्रीकृष्णकी सेवा ही भक्ति है। ऐसी भक्ति औपाधिक अर्थात् देह और मनोधर्मकी बाधासे रहित, कृष्णकी प्रीतिके लिए अखिल चेष्टायुक्त एवं निर्मल अर्थात् ज्ञान—कर्मरूप लताओंसे आच्छादित नहीं होनी चाहिए'—भक्तिकी यही परिभाषाएँ ज्ञात थीं। 'परानुरक्ति' यदि शास्त्रविधिसे स्वतन्त्र है और अनर्थोंसे मुक्त नहीं है, तो वह यथार्थ परानुरक्ति नहीं है। श्रील रूप गोस्वामीकी परिभाषामें 'अन्याभिलाषिता शून्य' से लेकर 'उत्तमा—भक्ति' तक सब कुछ परानुरक्तिमें अन्तर्निहित है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा शुद्धभक्तिको मिश्रित भक्तिसे अलग करके दिखलाना

'अन्याभिलाषिता शून्यं' श्लोकके प्रथम चरणमें श्रील रूप गोस्वामीने उन सबका निरूपण किया है, जो उत्तमा—भक्तिके प्रतिकूल है। उन्होंने आरोपसिद्धा—भक्ति, सङ्गसिद्धा—भक्ति, कर्ममिश्रा—भक्ति, योगमिश्रा—भक्ति, अन्याभिलाषितायुक्त—भक्ति आदि संज्ञा प्रदान करते हुए उनकी व्याख्याएँ भी की हैं।

जिस प्रकार हंस जलसे दूधको अलग कर लेता है, उसी प्रकार परमहंस गुणयुक्त श्रील रूप गोस्वामीने भी शुद्धभक्तिरूपी दूधको अन्यान्य मिश्रित भक्तिरूपी जलसे अलग किया है।

उत्तमा—भक्तिका लक्ष्य किसके प्रति

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित 'अन्याभिलाषिता शून्यं' श्लोकमें वर्णित उत्तमा—भक्ति क्या नारायण, राम, नृसिंह आदि भगवान्‌के अवतारोंके प्रति हो सकती है? नहीं। केवल व्रजभक्ति और उसमें भी उन्नत—उज्ज्वल—रसमें

मञ्जरी–भावसे भक्ति ही उत्तमा–भक्ति है, क्योंकि उसके द्वारा ही यथार्थ 'आनुकूल्येन कृष्ण अनुशीलन' होता है। यहाँ केवल कृष्ण–अनुशीलन ही क्यों कहा गया है, राम या नारायण अनुशीलन क्यों नहीं कहा गया है? इसका कारण है कि राम, नृसिंह, नारायण आदि अवतार रास आदि लीलाएँ नहीं कर सकते हैं, यहाँ तक कि यशोदानन्दन कृष्ण भी रास–लीला नहीं कर सकते। अतः रासरसेश्वर श्रीराधाकान्तके प्रति अनुकूलमयी अर्थात् मञ्जरी–भाव युक्त प्रेमाभक्ति ही उत्तमा–भक्ति है।

साधनका वास्तविक तात्पर्य

साधन क्या है? मनमाने ढंगसे हरिनाम करना या ग्रन्थ पढ़ना या अर्चन करना साधन नहीं है। साधनका अर्थ है साध्यको लक्ष्य करके उसकी प्राप्तिके लिए चेष्टा करना, तथा साध्य है–प्रीति। भक्ति नित्य–सिद्ध भाव है। जब हम उस नित्य–सिद्ध भावको प्राप्त करनेके लिए अपनी इन्द्रियों द्वारा चेष्टा करते हैं और '**अन्याभिलाषिता शून्यं**' श्लोकके तात्पर्यको अपने जीवनमें अपनाते हैं, तब वह साधन–भक्ति है। हम कानसे श्रवण करते हैं, जिह्वासे हरिनाम लेते हैं और मनसे ध्यान करते हैं–ये सब चेष्टाएँ केवल भावको जागृत करनेके लिए ही हैं।

भावका वास्तविक तात्पर्य

साधनकी शिक्षा देनेके बाद श्रील रूप गोस्वामीने भावके सम्बन्धमें बतलाया। उन्होंने बतलाया कि हमें नित्य–सिद्ध परिकरोंके भावोंको प्राप्त करनेका प्रयास करना चाहिये।

©Śyāmarāṇī dāsī

परन्तु, भाव मनकी प्रक्रिया नहीं है, क्योंकि मानसिक क्रियाओंका स्तर भावसे नीचे है। केवल मनके द्वारा ध्यान करनेको भाव नहीं कहते। जब मन आत्माका अनुसरण करता है और आत्मा नित्य–सिद्ध परिकरोंका अनुसरण करती है, उस अवस्थाको भाव कहते हैं।

शुद्ध–सत्त्व कहाँ उदित होता है

श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा वर्णित शुद्ध–सत्त्वके ग्राहक कौन हैं? जिनमें भाव उदित हो चुका है, उनमें ही यह शुद्ध–सत्त्व आविर्भूत होता है। भाव मनकी प्रक्रिया नहीं है। यह अति उच्च अवस्था है। भावकी क्रियाएँ गोलोक वृन्दावन तक जाती हैं और श्रीरूप मञ्जरीके हृदयके भावोंके स्तरको प्राप्त करती है। श्रील रूप गोस्वामीके आनुगत्यमें भजन करते–करते श्रीरूप–मञ्जरीका भाव हृदयमें प्रकाशित होता है।

भावके बाद हृदयमें प्रेम आविर्भूत होता है। प्रथमतः वह स्थायीभावके रूपमें और फिर विभाव, अनुभाव, सात्त्विक और सञ्चारीभाव इत्यादिके रूपमें प्रकाशित होता है। इन सबके मिलनेपर रस उदित होता है। यही विचार श्रील रूप गोस्वामीने प्रकाशित किया है।

भाव

शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्यांशुसाम्यभाक्।
रुचिभिश्चित्तमासृन्य कृदसौ भाव उच्यते॥

(भ॰र॰सि॰ १/३/१)

अर्थात् जो भक्ति शुद्धसत्त्व स्वरूप, प्रेमरूप सूर्यकी किरणके सादृश्ययुक्त (समान) तथा रुचि द्वारा चित्तको आद्रित (द्रवीभूत) करनेवाली है, उसे भाव भक्ति कहते हैं।

भावकी घनीभूत अवस्था ही प्रेम

भावकी अवस्थामें अनर्थ लुप्तप्राय हो जाते हैं, किन्तु कभी–कभी वे प्रकट भी हो सकते हैं, यद्यपि उस समय वे विघ्नकारक नहीं होते हैं। प्रेमकी अवस्थामें अनर्थ पूर्णतः लुप्त हो जाते हैं। भाव घनीभूत होकर प्रेमकी अवस्थाको प्राप्त करता है। प्रेमकी अवस्थामें अष्टसात्त्विक भाव पूर्ण रूपसे प्रकाशित होते हैं और चित्त पूर्णतः द्रवीभूत हो जाता है। यद्यपि हम अपनी वर्तमान अवस्थामें अश्रु या उल्लासका अनुभव करते हैं, किन्तु यह एक आभासमात्र है, शुद्ध नहीं है, क्योंकि अनर्थोंसे ग्रस्त होनेके कारण यह अस्थायी है।

प्रेमकी अवस्थामें भक्त सोचता है कि कृष्ण मेरे हैं और मैं कृष्णका हूँ।

स्नेह, मान, प्रणय और राग

प्रेमके बाद स्नेहकी अवस्था आती है, जिसमें हृदय सदा द्रवीभूत रहता है। स्नेहके बाद मान और उसके बाद प्रणय तथा राग आता है। श्रील रूप गोस्वामीने इन सब स्तरोंकी व्याख्या की है।

अनुराग

अनुरागके स्तरपर भक्त सदैव श्रीकृष्णको नव–नवायमान रूपमें देखता है। प्रातः काल होनेपर श्रीकृष्णको देखकर श्रीमती राधिका कहतीं हैं, "वह पुरुष कौन है? मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा। वह बहुत आकर्षक है।"

श्रीललिता सखी उत्तर देती हैं, "वह कौन है? क्या तुम नहीं जानती? कल सम्पूर्ण रात्रि तुम उसके साथ थी!' तब श्रीमती राधिका कहती हैं—'नहीं, नहीं, मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा है।'

जब अनुराग अपनी सर्वाधिक घनीभूत अवस्थाको प्राप्त होता है तब श्रीकृष्ण और गोपियोंके बीच परस्पर प्रतिस्पर्द्धा होती है। जब श्रीमती राधिका कृष्णको देखतीं हैं, उस समय श्रीमती राधिकाका श्रीकृष्णके प्रति आकर्षण और श्रीकृष्णको प्रसन्न करनेकी उनकी स्पृहा वर्धित होती है। जब कृष्णको यह ज्ञात होता है कि श्रीराधाजीका उनके प्रति आकर्षण हैं, तो वे बहुत प्रसन्न होते हैं और जब श्रीराधिकाजी उनकी प्रसन्नताको देखती हैं, तो श्रीराधिकाजीकी भी प्रसन्नता वर्धित होती है। इस प्रकार श्रीकृष्ण और गोपियोंके अनुरागमें निरन्तर प्रतिस्पर्द्धा होती है।

अत्यन्त घनीभूत हो जाता है, तो वह एक ऐसी अवस्थाको प्राप्त होता है जिसमें इन तीनोंका परस्पर भेद लुप्त हो जाता है। यह स्वसम्वेद्य दशा है। यह दशा इतनी श्रेष्ठ है कि श्रीमती राधिका भूल जाती हैं कि 'मैं राधिका हूँ' और श्रीकृष्ण भूल जाते हैं कि 'मैं कृष्ण हूँ'। इस दशामें प्रेम ही कर्ता बनकर प्रमुख–तत्त्वके रूपमें विराजित होता है और केवलमात्र आनन्दकी अनुभूति ही रहती है। कौन विषय है और कौन आश्रय है—यह ज्ञान स्वसम्वेद्य दशामें लुप्त हो जाता है। इस दशाका यथार्थ रूपसे वर्णन करना असम्भव है, केवल श्रीमती राधिका, जो इसे अनुभव करती हैं, वही इसका वर्णन कर सकती हैं।

यावत्–आश्रय–वृत्ति

जब अनुराग नित्य वर्धित होकर उन्नत स्तरको प्राप्त होता है, तो उसे यावत्–आश्रय–वृत्ति कहते हैं। श्रीकृष्ण विषय हैं और भक्त आश्रय हैं। कृष्ण वस्तु हैं और भक्त पात्र हैं। विषय–तत्त्वमें श्रीकृष्ण सर्वोत्तम हैं और आश्रय–तत्त्वमें श्रीमती राधिका सर्वोत्तम हैं।

स्वसम्वेद्य दशा

जिस स्तरमें आश्रयतत्त्वकी श्रीकृष्णको प्रेम करनेकी वृत्ति अपनी चरम सीमा तक वर्धित हो जाती है उसे 'स्वसम्वेद्य दशा' कहते हैं। यह दशा इतनी उन्नत है कि इसे केवल वही व्यक्ति यथार्थ रूपमें वर्णन कर सकता है या समझ सकता है जो इसे साक्षात् अनुभव कर रहा हो।

प्रेमके तीन विभाग

प्रेममें तीन विभाग हैं—विषय (भगवान्), आश्रय (भक्त) और उनके बीच परस्परका सम्बन्ध (भक्ति)। जब अनुराग

यावत्–आश्रय–वृत्तिमें कृष्णके प्रति आकर्षण नित्य–वर्धित होता रहता है और वह क्रमशः स्वसम्वेद्य दशाके सर्वोच्च स्तर तक पहुँचता है। इस दशामें सभी अष्टसात्त्विक भाव एक ही पात्रमें और एक ही समयमें पूर्णतः प्रकाशित होते हैं। साधारणतः अष्टसात्त्विक–भावकी अनुभूतिके पाँच स्तर होते हैं—धूमायित, ज्वलित, दीप्त, उद्दीप्त और सुद्दीप्त। कदापि एक या दो अष्टसात्त्विक–भाव एक साथ प्रेमके बहुत निम्न स्तरमें प्रकाशित होते हैं, किन्तु सभी आठों सात्त्विक–भाव स्वसम्वेद्य दशामें एक ही साथ पूर्णतः प्रकाशित होते हैं। श्रील रूप गोस्वामीने प्रेमकी इन सभी अवस्थाओंका वर्णन किया है। उनकी कृपाके बिना हम किस प्रकार यह सब जान सकते हैं?

श्रील रूप गोस्वामीकी शिक्षाओंके द्वारा सभी सम्प्रदाय ही प्रभावित

श्रीचैतन्य महाप्रभुके इस जगतमें आनेसे पूर्व किसीको भी प्रेमके इन स्तरोंकी जानकारी नहीं थी। यद्यपि लोगोंको कुछ–कुछ अनुमान था, किन्तु किसीने इनकी यथार्थ

रूपमें विवेचना नहीं की थी। श्रीमन्महाप्रभुने इन समस्त स्तरोंकी यथार्थ व्याख्याएँ श्रील रूप गोस्वामीके हृदयमें आविर्भूत करायीं थीं। श्रीमन्महाप्रभुकी शक्तिसे सञ्चारित होकर श्रील रूप गोस्वामीने जो समस्त शिक्षाएँ दीं, उनकी उन शिक्षाओंने न केवल गौड़ीय–सम्प्रदाय अपितु अन्य सम्प्रदायोंको भी प्रभावित किया है।

श्रील रूप गोस्वामीसे पहले श्रीमती राधाजीके प्रेमकी महिमाकी किसीने भी सर्वाङ्ग–सुन्दर व्याख्या नहीं की। उनसे पहले वात्सल्य रस तथा अन्यान्य रसोंकी व्याख्या होती थी, किन्तु मधुर–रस, उसमें भी परकीया–भावकी व्याख्या अथवा उसका आदर नहीं था।

श्रील रूप गोस्वामीका दैन्य

श्रील रूप गोस्वामी एकमात्र श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको स्थापित करनेके लिये ही जगत्में आये थे। प्रेमरसका सिद्धान्त जगतमें प्रकाशित नहीं था, किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभुकी कृपा द्वारा श्रील रूप गोस्वामीने उसे शास्त्रीयरूप प्रदानकर प्रतिष्ठित किया तथा इस प्रकार उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टकी स्थापना की। इतना करने पर भी उन्होंने दीनतापूर्वक यही कहा कि मैंने श्रीमन्महाप्रभुकी कृपासे अप्राकृत–रससिन्धुकी एक बूँदका अनुभवकर उसे जगतवासियोंको प्रदान किया है।

श्रील रूप गोस्वामीके ग्रन्थोंके आस्वादनकी विधि

श्रील रूप गोस्वामीने मधुररसके ग्रन्थोंकी रचना की है। जो साधक रूपानुग–प्रवर श्रील रघुनाथदास गोस्वामी और श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीका आश्रय लेंगे, वे ही यथार्थमें मधुररसका आस्वादन कर सकते हैं।

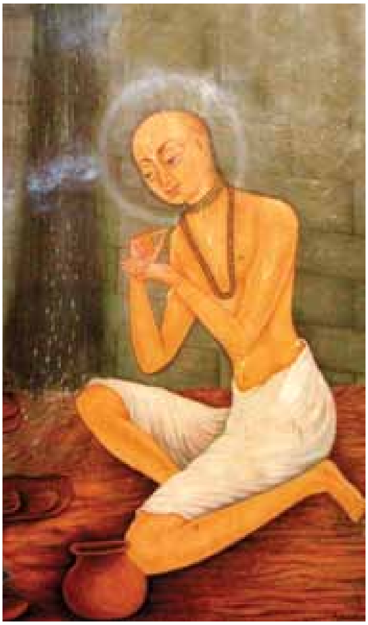

रूपानुगा एवं रागानुगा

व्रजवासियोंके हृदयमें श्रीकृष्णके प्रति जो स्वाभाविक 'ममता' है, उसे 'अनुराग' कहते हैं। यह अनुराग व्रजवासियोंकी आत्मामें विद्यमान होनेके कारण उन्हें रागात्मिकजन एवं उनकी भक्तिको 'रागात्मिका–भक्ति' कहते हैं। इस रागात्मिका–भक्तिको लक्ष्य करके जिस भक्तिका आश्रय लिया जाता है, उसे 'रागानुगा–भक्ति' कहते हैं। इसलिए व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णके परिकरों विशेषकर सख्य, वात्सल्य और मधुर–रसके परिकरोंकी सेवा–परिपाटीसे मुग्ध होकर वैसी–वैसी सेवाओंके प्रति लोभके साथ जिस साधन–भक्ति एवं भाव–भक्तिका अनुष्ठान किया जाता है, उसे रागानुगा–भक्ति कहते हैं। यहाँ तक की अयोध्यामें हनुमानजीके दास्यसे आकृष्ट होकर जिस भक्तिका अवलम्बन किया जाता है, उसे भी रागानुगा–भक्ति कहा जा सकता है। इसलिए ये सभी 'रागानुग' भक्त तो कहलायेंगे, किन्तु सभी 'रूपानुग' नहीं कहे जा सकते हैं।

'रूपानुग' एक विशेष भाव है। श्रील रूप गोस्वामीजीका अपना क्या भाव है—इसे विचार करना होगा। श्रील रूप गोस्वामीपादने स्वरचित श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु ग्रन्थमें

समस्त रसोंका विशदरूपमें विवेचन किया है तथा तटस्थ होकर समस्त रसोंका वर्णन करते हुए उनका पार्थक्य भी दिखलाया है। इसलिए श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु ग्रन्थमें उन्होंने अपने निज–भावको व्यक्त नहीं किया। किन्तु इसे उन्होंने स्वरचित उज्ज्वलनीलमणि, उत्कल्लिकावल्लरी एवं चाटुपुष्पाञ्जलि इत्यादि ग्रन्थोंमें प्रकाशित किया है। उनके इस अपने भावको लक्ष्य करके जो एकान्तिकरूपसे श्रील रूप गोस्वामीका आनुगत्य करते हैं, केवलमात्र वे ही 'रूपानुग वैष्णव' कहे जायेंगे। अतएव यह सिद्ध होता है कि सभी रूपानुग–वैष्णव रागानुग तो हैं, किन्तु सभी रागानुग–वैष्णव रूपानुग नहीं हो सकते हैं।

श्रील रूप गोस्वामीके अपने भावका स्तवमालामें वर्णन

श्रील रूप गोस्वामीका अपना भाव क्या है? इसे समझनेके लिए उनके द्वारा रचित स्तवमालामें प्रवेश करना पड़ेगा। श्रील रूप गोस्वामीने अपने भावोंको वहाँ प्रकाशित किया है।

श्रीषड्गोस्वामियोंमें अन्यतम श्रील जीव गोस्वामी 'श्रीस्तवमाला' के प्रारम्भमें लिखते हैं—

श्रीमदीश्वर–रूपेण रसामृतकृता कृता।
स्तवमालानुजीवेन जीवेन समगृह्यत॥

(श्रीस्तवमाला श्लोक संख्या १)

"मदीश्वर श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु नामक ग्रन्थ एवं [श्रीचैतन्यदेव, श्रीप्रेमन्दुसागर–संज्ञक श्रीकृष्णेर–अष्टोत्तर–शतनाम, श्रीकुञ्जबिहारी–अष्टक, श्रीराधिका–स्तव, चाटुपुष्पाञ्जलि आदि] अनेकानेक स्तवोंकी रचना की थी। ये समस्त अपूर्व स्तव भक्तोंके कण्ठभूषण बनें, ऐसा विचारकर क्रमरहित अवस्थामें इधर–उधर बिखरे हुए इन सभी स्तवरूप पुष्पोंको संग्रहकर उनके शिष्य जीव नामक मैंने उन्हें स्तवमालाके रूपमें यथाक्रमसे गुम्फित किया है।"

'उत्कलिकावल्लरिः'—श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित श्रीस्तवमालाका एक काव्य–पुष्प

श्रीगौरपार्षद प्रवर श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने गौर–कृपाभिषिक्त होकर अप्राकृत–रस–शास्त्रके आचार्यके रूपमें जिन समस्त अमूल्य कृतियोंकी रचना की है, श्रीस्तवमाला भी उन्हींमेंसे उनकी एक अपूर्व कृति है। श्रीश्रीराधाकृष्ण–सेवा–प्रार्थनामय 'उत्कलिकावल्लरिः' श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित एवं श्रील जीव गोस्वामी द्वारा संगृहीत इसी श्रीस्तवमालाका एक काव्य–पुष्प है। श्रील रूप गोस्वामीकी उन्नत–उज्ज्वल–माधुर्यमयी भक्तिरूपी–भ्रमरीके मधुर गुँजनका उच्चादर्श ही इस स्तोत्रमें परिस्फटित हुआ है। 'उत्कलिका' का अर्थ है—'सुतीव्र–उत्कण्ठा' अथवा 'सुतीव्र व्याकुलता' तथा 'वल्लरिः' का अर्थ है—'लता'। अतएव 'उत्कलिका–वल्लरिः' का अर्थ हुआ—सुतीव्र उत्कण्ठामयी लता। यद्यपि इस उत्कलिकावल्लरिः का प्रत्येक श्लोक स्वयंमें परिपूर्ण है, तथापि इसकी भावशृङ्खला 'पीत्वा, पीत्वा पुनः पीत्वा' की रीतिके अनुसार उस बिन्दु तक जा पहुँचती है, जहाँ पाठक अथवा श्रोता समस्त प्रकारके तापोंसे विमुक्त होकर श्रीरूप

मञ्जरीके आनुगत्यमें श्रीराधारमणके श्रीचरणोंका किङ्कर बननेके लिए लालायित हो उठता है।

'उत्कलिकावल्लरिः' के श्लोक श्रील रूप गोस्वामीकी विरहमयी अनुभूतियोंके अनुपम मुक्ताकण

श्रील रूप गोस्वामी प्रभु उज्ज्वल–माधुर्यमय–रस–सिन्धुकी अद्भुत स्फूर्तिरूपी–तरङ्गोंमें डूबते–उतरते हैं, विलाप करते हैं, आर्त्तनाद करते हैं, सिसकते हैं तथा पुनः–पुनः मूर्च्छित होते हैं। ऐसी स्फर्ति होनेपर वे व्रजभूमि, व्रजपरिकर एवं श्रीश्रीराधाकृष्णके प्रणयीजनोंके समक्ष श्रीयुगलमाधुरीके कृपाकटाक्षको प्राप्त करनेकी लालसा प्रकट करते हैं तथा लीला–पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण एवं वृषभानुनन्दिनी श्रीराधाकी पारस्परिक, नवनवायमान, परम दिव्य, वैचित्र्यपूर्ण केलिमय लीलाओंमें प्रवेशकी अभिलाषासे युक्त होकर हृदय–विदारक गुहार लगाते हैं। श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने इस विरह–स्तोत्र–काव्यमें युगलकेलि–प्रणयरसकी अतल गहरायियोंमें उतरकर अपनी हृदय–विदारक विरहमयी अनुभूतियोंके अनुपम मुक्ताकण बिखेर दिये हैं। इन मुक्ताकणोंकी द्युतिका आभास व्रजरसके उपासकोंको तो हो सकता है, किन्तु भजन–सम्पत्तिसे शून्य जीवोंक लिए उसकी कल्पना करना भी सम्भव नहीं है। पग–पगपर श्रील रूप गोस्वामीकी प्रार्थनाएँ अति रहस्यमयी, विदग्धतापूर्ण एवं मार्मिक होती जाती हैं। अपने नित्य स्वरूपमें आविष्ट श्रील रूप गोस्वामी प्रभु अपने अप्राकट्यकी पूर्ववर्त्ती दशामें कुछ और कह नहीं पाते, उनका पुञ्जीभूत विरह–ताप थम नहीं पाता, कण्ठ अवरुद्ध हो जाता है, अविरल अश्रुधाराओंके साथ अन्तमें यही निवेदन करते हैं—

उद्गीर्णाभूदुत्कलिकावल्लररग्रे वृन्दाटव्यां
नित्यविलास व्रतयोर्वाम्।
वाङ्मात्रेण व्याहरतोऽप्युल्लमेतामाकर्ण्येशौ
कामितसिद्धिं करुतं मे॥

(उत्कलिकावल्लरिः श्लोक संख्या ७०)

अर्थात् हे नाथ श्रीकृष्ण! हे मदीश्वरि श्रीराधिके! इस श्रीवृन्दावनमें नित्य–विलास–परायण तुम्हारे सम्मुख यह उत्कलिकावल्लरिः (उत्कण्ठारूप लता) उत्पन्न हुई है। केवल वचनोंके द्वारा ही तुम्हारे निकट इसका कीर्त्तन करके मुझमें कम्प उदित हो रहा है, अतः इसे सुननेके बाद कृपापूर्वक इस अतिशय दीन–जनकी अभिलषित सेवा–प्राप्तिकी प्रार्थनाको सिद्ध (सफल) करो।

इस प्रकार श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने समस्त शास्त्रोंके सार–स्वरूप भक्तिके गूढ़ सिद्धान्तोंका प्रतिपादन करते हुए विरह–रससे परिपूर्ण उन्नत–उज्ज्वलरसमयी भक्ति–धाराको इस स्तोत्रमें प्रवाहित किया है।

> **श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने समस्त शास्त्रोंके सार–स्वरूप भक्तिके गूढ़ सिद्धान्तोंका प्रतिपादन करते हुए विरह–रससे परिपूर्ण उन्नत–उज्ज्वलरसमयी भक्ति–धाराको उत्कलिकावल्लरिः नामक स्तोत्रमें प्रवाहित किया है।**

ध्वनि–प्रस्थापन–परमाचार्य

उपेन्द्रवज्रा इत्यादि विविध छन्द, किलकिञ्चित्, कुट्टमित और बिव्वोक आदि शृङ्गारपरक भक्तिभाव, श्लेष, रूपक एवं अनुप्रास इत्यादि अलङ्कारोंसे श्रील रूप गोस्वामी विरचित 'उत्कलिकावल्लरिः' नामक स्तोत्र–काव्य अत्यद्भुत बन पड़ा है। रस–ध्वनिकी स्वतन्त्र व्याख्या प्रस्तुत करनेके कारण श्रील रूप गोस्वामी प्रभुको ध्वनि–प्रस्थापन–परमाचार्यकी ख्याति प्राप्त है। उनकी भावाभिव्यक्ति अद्भुत है और कलाभिव्यक्तिका शैली–विन्यास भी अपूर्व है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा व्रजमें वास करनेकी पद्धतिका निरूपण

श्रील रूप गोस्वामीने व्रजरस–लोलुप भक्तोंको श्रीवृन्दावनधाममें वास करने हेतु परामर्श देते हुए कहा है—

तन्नामरूपचरितादि–सुकीर्त्तनानु–
स्मृत्यो:क्रमेण रसनामनसी नियोज्य।
तिष्ठन् व्रजे तदनुरागिजनानुगामी
कालं नयेदखिलमित्युपदेशसारम्॥

(श्रीउपदेशामृत श्लोक संख्या ८)

अर्थात् भक्तमात्रको चाहिये कि वह क्रमशः अपनी रसना और मनको अन्यान्य कृष्णेतर विषयोंसे हटाकर श्रीकृष्णके नाम, रूप, गुण और लीला–कथाके कीर्त्तन और स्मरणमें लगाकर, श्रीव्रजमण्डलमें ही निवासकर, श्रीकृष्णके अनुरागीजनोंका अनुगामी बनकर अपने समस्त समयको व्यतीत करता रहे—यही समस्त उपदेशोंका सार है।

यद्यपि जिस किसी भी प्रकारसे व्रजवास करनेका भी शास्त्रोंमें बहुत माहात्म्य बतलाया गया है, तथापि केवल शरीरके द्वारा व्रजवास करनेमात्रसे ही श्रीमन् महाप्रभु तथा उनके मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा उपदिष्ट विशुद्ध–भक्तिरसको प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसलिए श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने व्रजमें वास करनेकी पद्धतिका भी उक्त श्लोकमें ही निरूपण किया है। जिस किसी प्रकारसे भोजन, शयन, विहार अथवा लाभ, पूजा, प्रतिष्ठा इत्यादि विषय भोगोंकी आड़में कपट भजन करनेवालोंकी तो बात ही क्या, वैधी–भक्तिपरायण साधकोंका अनुगमन करनेसे भी श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा आचरित–प्रचारित उन्नत–उज्ज्वलरसमय प्रेमभक्तिकी अथवा रूपानुगत्वकी प्राप्ति नहीं होगी। श्रीव्रजेन्द्रनन्दनके अन्तरङ्ग व्रजलीलाके परिकरोंका अनुगमन करनेवाले रसिक गुरुजनोंके आनुगत्यमें रहकर ही श्रीकृष्णभक्तिका अनुशीलन करना होगा। इसलिए केवलमात्र शरीरसे वास करनेसे ही कोई व्रजवासी नहीं होता, बल्कि मन अथवा

जिस किसी प्रकारसे भोजन, शयन, विहार अथवा लाभ, पूजा, प्रतिष्ठा इत्यादि विषय भोगोंकी आड़में कपट भजन करनेवालोंकी तो बात ही क्या, वैधी–भक्तिपरायण साधकोंका अनुगमन करनेसे भी श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा आचरित–प्रचारित उन्नत–उज्ज्वलरसमय प्रेमभक्तिकी अथवा रूपानुगत्वकी प्राप्ति नहीं होगी।

चित्तवृत्तिसे निरन्तर व्रज–रसानुगामीजनोंके अनुगत होकर जीवनका प्रत्येक क्षण बितानेसे व्रजवास सार्थक होता है। इसी सिद्धान्तको प्रतिपादित करनेके लिए ही शरीरसे कभी भी व्रजमें एक मुहूर्तके लिए भी वास नहीं करनेवाले श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामीको श्रीमन् महाप्रभुने 'शुद्ध व्रजवासी' कहकर सम्बोधित किया था।

सजातीय–आशय–स्निग्ध भक्तोंके सङ्गमें ही उत्तमा–भक्तिका याजन विधेय

एक और बात ध्यान रखने योग्य है कि प्रारम्भिक अनर्थग्रस्त अवस्थामें केवल लीलाओंके मानसिक स्मरणका अभ्यास करना तथा इस प्रकारके निर्जन भजन करनेका छल करके आलस्यको प्रश्रय देना उचित नहीं है। अप्राकृत रसाचार्य श्रील रूप गोस्वामीने रागभजनकी जिस पद्धतिका निरूपण किया है, उस पद्धतिको अतिक्रम करके सर्वश्रेष्ठ अवस्थाकी हरिभक्तिको प्रदर्शित करनेकी चेष्टा केवल उच्छृङ्खलता और अमङ्गलमय जगत्–नाशकर कुचेष्टामात्र है। हमारे परमाराध्य परमगुरुदेव श्रील

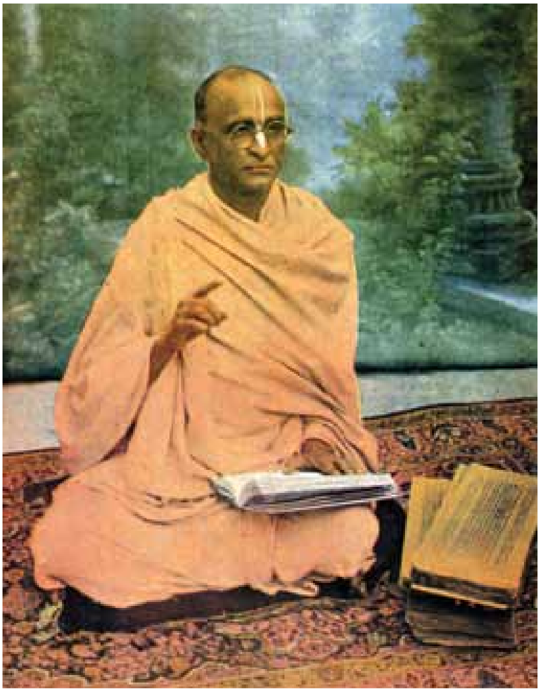

भक्तिसिद्धान्त सरस्वती 'प्रभुपाद' के उपदेश—**"कीर्त्तन प्रभावे, स्मरण हइबे, से काले भजन निर्जन सम्भव।"**—का सदैव स्मरण रखना चाहिये। अतएव श्रील रूप गोस्वामी द्वारा अभिलषित उन्नत–उज्ज्वल–भक्तिरसके अन्तर्गत सेवा–सुखके लेशमात्रको प्राप्त करनेके इच्छुक साधकोंके लिए अन्याभिलाषितासे शून्य तथा ज्ञान और कर्मसे अनावृत होकर सजातीय–आशय–स्निग्ध भक्तोंके सङ्गमें ही अनुकल–कृष्णानुशीलनमयी उत्तमा–भक्तिका याजन करना ही विधेय है।

श्रीरूप मञ्जरीका भाव–तत्तत्भाव इच्छात्मिका

श्रीललिता, श्रीविशाखा इत्यादि सखियाँ कामात्मिका–भक्तिकी मूल आधार हैं और श्रीरूप मञ्जरी इत्यादि तत्तत्भाव इच्छात्मिका हैं। इनको युगलका मिलन करानेमें ही आनन्द आता है। काम तो इनमें भी परिपूर्ण रूपमें है, किन्तु श्रीराधाजीका श्रीकृष्णसे मिलन करानेमें ही उनके कामकी पूर्त्ति स्वत: ही हो जाती है।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित 'श्रीश्रीराधाकृष्णगणोद्देश–दीपिका'

श्रील रूप गोस्वामीने अपने परम मधुर स्वभाववशत: स्वरचित 'श्रीश्रीराधाकृष्णगणोद्देश–दीपिका' नामक ग्रन्थके बृहद् भागमें वात्सल्य और मधुर रसके परिकरों तथा लघु भागमें सख्य और दास्य रसके परिकरोंके नाम, रूप, गुण और सेवा–परिपाटीका संक्षिप्त, किन्तु मार्मिक वर्णन प्रस्तुत किया है। ग्रन्थमें कहीं–कहीं, विशेष करके लघु भागमें श्रीश्रीराधागोविन्दके रूप, अङ्ग–प्रत्यङ्ग, उनके शृङ्गार तथा उनके द्वारा व्यवहृत अद्भुत वस्तुओंका अति सूक्ष्मरूपसे वर्णन किया गया है। श्रीकृष्ण एवं उनके परिकरोंका ऐसा परिचय एक साथ किसी भी दूसरे ग्रन्थमें उपलब्ध नहीं है। श्रीश्रीराधाकृष्णके गणों अर्थात् परिकरोंका संक्षिप्त रूपसे निदर्शन करानेवाला होनेके कारण इसका नाम श्रीश्रीराधाकृष्णगणोद्देश–दीपिका है।

रागानुगा–भक्तिके अधिकारी

व्रजके शुद्ध–रसिक भक्तोंके मुखसे श्रीकृष्णकी अप्राकृत लीला कथाओंका श्रवण करके जिन सौभाग्यशाली जीवोंके हृदयमें व्रजवासियों जैसे भावों द्वारा श्रीकृष्णकी सेवा–सुश्रुषा करनेका लोभ जागृत होता है, वे ही रागानुगा–भक्तिके अधिकारी हैं।

'श्रीकृष्णके नित्य–सिद्ध परिकरोंका कृष्णके प्रति कैसा मधुर भाव है! क्या मुझे भी वैसा ही भाव प्राप्त हो सकता है? कैसे वह भाव प्राप्त हो?' इसे प्राप्त करनेके लिए हृदयमें छटपटाहट होती है—ऐसी छटपटाहट या तीव्र–लालसा ही उक्त लोभका लक्षण है।

जब साधकके जीवनमें ऐसी अवस्था आती है, तब वह महाजनों द्वारा दिखलाये गये मार्गका अनुसरण करते हुए साधक देहसे बाहरमें श्रीरूप–सनातन आदि व्रजवासियोंके आनुगत्यमें उनके जैसी श्रवण–कीर्त्तन–संख्यापूर्वक नाम–गान आदि कायिक–सेवा तथा सिद्धदेहसे श्रीललिता, श्रीविशाखा और श्रीरूप–मञ्जरी आदिके आनुगत्यमें मानसी–सेवा करता है।

उस अप्राकृत–चिन्मय–मानसी–सेवाका अनुशीलन करनेके लिए श्रीश्रीराधाकृष्णके जिन नित्य परिकरोंका परिचय तथा उनकी प्रेममयी सेवाकी प्रणालीको जाननेकी आवश्यकता होती है, उसीका ही 'श्रीश्रीराधाकृष्णगणोद्देश–दीपिका' ग्रन्थमें वर्णन किया गया है। प्रसङ्गवशतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सिद्धदशामें उपासनाकी परिपूर्णताके लिए यही ग्रन्थ एकमात्र पथ–प्रदर्शक है।

टेर कदम्ब–श्रील रूप गोस्वामीकी भजन कुटी

नन्दग्राममें आशीषेश्वर महादेवके निकट स्थित टेरकदम्ब नामक लीला–स्थलीमें ही श्रील रूप गोस्वामीकी भजन कुटी स्थित है। श्रील रूप गोस्वामी श्रीकृष्णकी मधुर–लीलाओंकी स्मृतिके लिए प्रायः इस निर्जन स्थलीमें भजन करते थे। वे यहाँपर अपने प्रिय ग्रन्थोंकी रचना भी करते थे। उन्हें जब कभी महाभावमयी श्रीमती राधिकाके विप्रलम्भ–भावोंकी स्फूर्ति होती, तो हठात् उनके मुखसे विप्रलम्भ–भावमय श्लोक निकल आते थे। उस समय वहाँके कदम्ब वृक्षोंके समस्त पत्ते उस विरहाग्निमें सूखकर नीचे गिर जाते तथा पुनः जब उनके हृदयमें युगल मिलनकी स्फूर्ति होती, तब उनके मिलन विषयक पदोंको सुनकर कदम्ब वृक्षोंमें नई–नई कोपलें निकल आती थीं।

श्रीमती राधारानी द्वारा श्रील रूप गोस्वामीकी इच्छाकी पूर्त्ति

एक समय श्रील सनातन गोस्वामी श्रील रूप गोस्वामीसे मिलनेके लिए टेर कदम्ब आये। उन दोनोंमें परस्पर श्रीकृष्णकी रसमयी कथाएँ होने लगीं। दोनों कृष्णकथामें इतने आविष्ट हो गये कि उन्हें समयका ध्यान ही नहीं रहा। दोपहरके पश्चात् आवेश कुछ कम होनेपर श्रील रूप गोस्वामीने सोचा "प्रसाद ग्रहण करनेका समय हो गया है, किन्तु मेरे पास कुछ भी नहीं है जिससे श्रीसनातन गोस्वामीकी सेवा कर सकूँ।" इसलिए वे कुछ चिन्तित हो गये। इतनेमें ही साधारण वेशमें एक सुन्दरी बालिका वहाँ उपस्थित हुई और श्रील रूप गोस्वामीको कहने लगी–"बाबा! मेरी मैयाने यह चावल, दूध और चीनी भेजी है, तुम शीघ्र खीर बनाकर पा लेना।" यह कहकर वह चली गई। किन्तु थोड़ी देरमें वह बालिका पुनः लौट आई और सामग्रीको उसी अवस्थामें देखकर बोली–"बाबा! तुम्हें बातचीत करनेसे ही अवसर नहीं, अतः मैं स्वयं ही पाक कर देती हूँ।" ऐसा कहकर उसने झट आसपाससे सूखे कण्डे (उपले) लाकर अपनी फूँकसे ही आग उत्पन्नकर थोड़ी ही देरमें अत्यन्त मधुर एवं सुगन्धित खीर प्रस्तुत कर दी और बोली–"बाबा! ठाकुरजीको भोग लगाकर जल्दीसे पा लो। मुझे बहुत विलम्ब हो गया है। मेरी मैया डाँटेगी, मैं जा रही हूँ।" ऐसा कहकर वह चली गई। श्रील रूप गोस्वामीने श्रीकृष्णको समर्पितकर वह खीर श्रील सनातन गोस्वामीके आगे प्रस्तुत की। जब दोनों भाइयोंने खीर खाई, तो उन्हें श्रीराधाकृष्णकी स्फूर्ति हो आई। वे हा राधे! हा राधे! कहकर विलाप करने लगे। श्रील सनातन गोस्वामीने कहा "मैंने ऐसी मधुर खीर जीवनमें कभी नहीं पायी। रूप, क्या भोजनके लिए तुमने मन–ही–मन कोई

अभिलाषा की थी? ऐसा निश्चित समझो की वह किशोरी और कोई नहीं, अपितु महाभावमयी कृष्णप्रिया स्वयं श्रीमती राधिकाजी ही थीं। भविष्यमें तुम उन्हें इस प्रकार कष्ट मत देना।" अपनी त्रुटि समझकर श्रील रूप गोस्वामी अत्यन्त खेद करने लगे। श्रील सनातन गोस्वामीके गमनके उपरान्त जब उन्हें थोड़ी झपकी आई तो स्वप्नमें श्रीराधिकाजीने उन्हें दर्शन देकर अपने मधुर–वचनोंसे उन्हें सान्त्वना दी।

श्रील रूप गोस्वामीके प्रत्येक वचनकी परम सत्यता

एकदिन जब श्रील रूप गोस्वामी ग्रन्थकी रचना करते समय श्रीमती राधाजीकी वेणीकी तुलना नागिनसे कर रहे थे, तभी श्रील सनातन गोस्वामीने उन्हें कहा—"अरे रूप! तुमने श्रीराधाजीकी वेणीकी उपमा नागिनसे की है। तुमने ऐसी कल्पना क्यों की? ऐसा लिखना उचित नहीं, क्योंकि नागिन तो विषधर होती है।" श्रील रूप गोस्वामीने कहा—"प्रभु, मुझसे भूल हो गयी, आप क्षमा करके इसका सुधार कर दीजिए।" श्रील सनातन गोस्वामीने कहा—"मैं विचार करके ही कुछ बतलाऊँगा।" इस प्रकार थोड़ी देरके बाद श्रील सनातन गोस्वामी वहाँसे चल दिये। जब वे विचार करते हुए मार्गमें जा रहे थे, तो उन्होंने स्पष्ट रूपसे देखा कि एक कदम्बके वृक्षके नीचे बहुतसी सुन्दर–सुन्दर किशोरी युवतियाँ खड़ी हैं तथा एक अति सुन्दरी हेमाङ्गी (गौर वर्णकी) किशोरी झूला झूल रही हैं। श्रील सनातन गोस्वामीने देखा कि झूला झूलते समय उस किशोरीके कन्धेके पास एक नागिन कभी तो अपना फन ऊपर उठा रही थी तथा पुनः कभी शान्त हो रही थी। ऐसा देखकर श्रील सनातन गोस्वामी भयभीत हो गये तथा दूरसे ही लाली! लाली! करते हुए ज्योंही वहाँ पहुँचे, तो देखा कि दृश्य अन्तर्धान हो गया। उन्होंने देखा कि न तो वहाँ कोई किशोरी है और न ही कोई

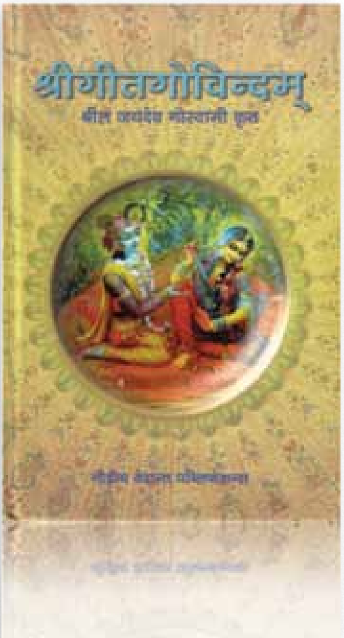

झूला है। अहो! श्रीमती राधाजीने मेरा संदेह दूर करनेके लिए ही मुझे दर्शन दिया है। श्रीरूप उन्हें बहुत प्रिय हैं। श्रीरूप मञ्जरी उनकी अति निकटस्थ हैं, इसलिए उनका वचन कभी गलत नहीं हो सकता।" श्रील सनातन गोस्वामी उसी समय लौटकर श्रील रूप गोस्वामीके पास आये तथा उनसे बोले कि तुमने जो लिखा है, वह सत्य ही है। उसमें संशोधन करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

इस लीलासे ऐसा प्रतीत होता है कि श्रील रूप गोस्वामीके वचनोंको पढ़कर श्रील सनातन गोस्वामी मानो भ्रममें पड़ गये हों तथा इसी कारण उन्होंने श्रील रूप गोस्वामीके वचनोंका संशोधन करनेकी इच्छा की। किन्तु वास्तवमें वे किसी भी प्रकारके भ्रममें नहीं थे, बल्कि श्रील रूप गोस्वामीकी महिमाको प्रकाशित करनेके उद्देश्यसे ही उन्होंने यह लीला–अभिनय किया।

श्रीजयदेव गोस्वामी और श्रील रूप गोस्वामीके भावोंका तुलनात्मक विश्लेषण

श्रीगीत–गोविन्द नामक ग्रन्थकी रचना करते समय एकदिन श्रीजयदेव गोस्वामीके मनमें विचार आया कि श्रीकृष्ण वासन्ती–रासके उपरान्त श्रीराधाजीके चरणोंमें अपना सिर झुका देना चाहते हैं। किन्तु, श्रीजयदेव गोस्वामीमें इस विषयको लिखनेका साहस नहीं हुआ। इसका कारण था कि परब्रह्म, परमेश्वर, समस्त रसोंके आधार, समस्त ईश्वरोंके भी ईश्वर, सबके आदि और स्वयं अनादि श्रीकृष्ण अपनी शक्तिके चरणोंमें नतमस्तक हुए हैं—इस विचारके मनमें आते ही उनका हाथ काँपने लगा और हाथसे कलम छूटकर गिर गयी। उन्होंने उसी समय पुस्तकको बाँधकर रख दिया तथा गंगा स्नान करनेके लिए चल दिये।

श्रीरूपमञ्जरी श्रीराधाजीके समान ही सुन्दर हैं। ... श्रीरूपमञ्जरीका तो रूप श्रीमती राधाजी जैसा ही है, क्योंकि वे श्रीमती राधिकाको सर्वाधिक प्रिय हैं। इसलिए श्रील सनातन गोस्वामी और अन्य-अन्य वैष्णव श्रील रूप गोस्वामीसे प्रार्थना करते हुए कहते हैं—'हे रूप! आप हमें अपनी कृपा प्रदान कीजिये।'

मार्गमें यही चिन्ता करने लगे—श्रीकृष्ण श्रीराधाजीके चरणोंमें कैसे गिर सकते हैं? ऐसा तो सम्भव नहीं। इतनेमें श्रीकृष्ण उनकी मनोभावनाको जानकर स्वयं उनके वेशमें उनके स्थानपर आकर अपने हाथोंसे—**"स्मर—गरल—खण्डनं मम शिरसि मण्डनं देहि पद—पल्लवमुदारम्। ज्वलति मयि दारुणो मदन—कदनानलो हरतु तदुपाहितविकारम्॥"** (श्रीगीतगोविन्द १०/७) अर्थात् "हे प्रिये! अपने मनोहर चरण किसलयरूपी पत्रको मेरे मस्तकपर आभूषण—स्वरूप अर्पण कराओ, जिससे मुझे जर्जरित करनेवाला यह अनङ्गरूप गरल प्रशमित हो जाय। जो मदन यातनारूप निदारुण अनल मुझे सन्तप्त कर रहा है, उससे वह दाहजन्य उत्पन्न विकार भी शान्त हो जाय"—लिखकर चले गये। किन्तु श्रीजयदेव गोस्वामी स्वयं ऐसा नही लिख सके। दूसरी ओर श्रील रूप गोस्वामीका विचार श्रीजयदेव गोस्वामीसे कितना श्रेष्ठ है। श्रील रूप गोस्वामी निःशङ्क चित्तसे लिख रहे हैं कि श्रीराधाजीके चरणोंमें गिरनेकी तो बात ही क्या, कृष्ण उनकी किङ्करियोंके चरणोंमें पुनः पुनः प्रार्थना करते हुए गिर रहे हैं और वे सब मुस्कराती हुई अपने कटाक्ष द्वारा कभी तो श्रीराधाजीको और कभी श्रीकृष्णको निहार रही हैं। वे किङ्करियाँ कृष्णको कुञ्जमें प्रवेश नहीं करने दे रहीं और कृष्ण हाथ जोड़कर काचु—माचु (अनुनय—विनय) करते हुए पुनः पुनः निवेदन कर रहे हैं। यही श्रील रूप गोस्वामीकी महिमा और वैशिष्ट्य है। यह श्रीमन्महाप्रभुकी कृपा—शक्तिका ही फल है, जिसे प्रयागमें उन्होंने श्रील रूप गोस्वामीमें सञ्चारित की थी।

श्रील सनातन गोस्वामी द्वारा श्रील रूप गोस्वामीकी कृपाकी प्रार्थना

श्रीबृहद्भागवतामृत ग्रन्थके आरम्भमें श्रील सनातन गोस्वामी श्रील रूप गोस्वामीकी कृपाकी प्रार्थना करते हैं। वे श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूप और श्रीमती राधिकाके रूपसे प्रार्थना करते हैं। श्रीमती राधिकाका रूप—श्रीरूप—मञ्जरी—श्रीराधाजीके समान ही सुन्दर हैं। राधिका और विशाखाका जन्म एक ही दिन हुआ था और उनके गुण एक जैसे हैं, किन्तु श्रीरूप मञ्जरीका तो रूप श्रीमती राधाजी जैसा ही है, क्योंकि वे श्रीमती राधिकाको सर्वाधिक प्रिय हैं। इसलिए श्रील सनातन गोस्वामी और अन्य—अन्य वैष्णव श्रील रूप गोस्वामीसे प्रार्थना करते हुए कहते हैं—'हे रूप! आप हमें अपनी कृपा प्रदान कीजिये। आप श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीश्रीराधाकृष्णके हृदयसे अवगत हैं।' हमारे गौड़ीय आचार्योंने अनेक स्थानोंपर इस प्रकारकी प्रार्थनाएँ कीं हैं।

परम रूपानुग वैष्णव

श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी, श्रील जीव गोस्वामी, श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी और हमारे सम्प्रदायके सभी आचार्योंने श्रील रूप गोस्वामीकी धारामें अनेकानेक ग्रन्थोंकी रचना की है। श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी परम रूपानुगके रूपमें जाने जाते हैं। स्वरचित विलास—कुसुमाञ्जलिमें वे सर्वप्रथम श्रीरूप मञ्जरीको प्रणाम करते हैं—

त्वं रूपमञ्जरि सखि प्रथिता पुरेऽस्मिन्
पुंसः परस्य वदनं न हि पश्यसीति।
बिम्बाधरे क्षतमनागतभर्तृकाया
यत्ते व्यधायि किमुतच्छुक—पुंगवेन॥

(विलापकुसुमाञ्जली १)

अर्थात् अयि सखि रूप मञ्जरी! इस व्रजमण्डलमें तुम निश्चय ही परपुरुषका मुख सन्दर्शन नहीं करती हो, अतएव तुम सबके द्वारा परम सतीके रूपमें जानी जाती हो। तुम्हारे पति तो उपस्थित नहीं है, किन्तु फिर तुम्हारे अधरमें यह क्षतचिह्न क्यों देख रहीं हूँ? इसलिए मुझे यह समझ आता है कि किसी शुकपक्षीने बिम्बफलके भ्रमसे अपनी चोंच द्वारा तुम्हारा अधर क्षत कर दिया है।

श्रील जीव गोस्वामीने श्रील रूप गोस्वामीके ग्रन्थोंका अध्ययन किया और गोपाल–चम्पु एवं षट्सन्दर्भ आदि ग्रन्थ लिखे। उन्होंने श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित उज्ज्वलनीलमणि और भक्तिरसामृतसिन्धुकी टीकायें भी लिखी। स्वरचित प्रेमभक्तिचन्द्रिकामें श्रील नरोत्तम दास ठाकुरने श्रील रूप गोस्वामीकी शिक्षाओंको ही व्यक्त किया है। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर भी 'रूपानुगवराय ते' अर्थात् 'रूपानुग वैष्णवोंमें श्रेष्ठ' के रूपमें जाने जाते हैं और उनके द्वारा रचित जैवधर्म श्रील रूप गोस्वामीकी शिक्षाओंसे पूर्ण रूपसे ओतप्रोत है। श्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरने श्रील रूप गोस्वामीके विचारोंके प्रतिकूल अन्यान्य सभी अपसिद्धान्तोंका विनाश किया है तथा श्रील रूप गोस्वामीके चरणकमलोंकी धूलि बननेको ही हमारे जीवनका एकमात्र उद्देश्य बतलाया है। मेरे परमाराध्य गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज तथा श्रील प्रभुपादके समस्त आश्रितजनोंने श्रील प्रभुपाद सरस्वती ठाकुरके इस उपदेशको पूर्णरूपसे शिराधार्य किया है। अतः ये सभी परम रूपानुग वैष्णव हैं।

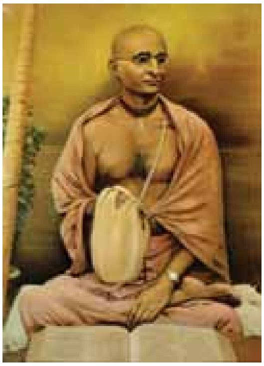

यदि श्रील रूप गोस्वामी इस जगत्में नही आते!

यदि श्रील रूप गोस्वामी इस जगत्में नहीं आते, तो श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रवाहित की जानेवाली श्रीमती राधाजीकी चरणसेवारूपी कृपाकी बाढ़ श्रीचैतन्य महाप्रभुके अप्रकटके साथ–ही–साथ इस जगतसे विलुप्त हो जाती।

यदि श्रील रूप गोस्वामी प्रभु इस जगतमें नहीं आते तो श्रीश्रीराधाकृष्णकी प्रेमरूप निधिका द्वार कौन खोलता? श्रील रूप गोस्वामीकी इस देनके कारण ही हम अपनेको रूपानुगा कहनेमें गर्वका अनुभव करते हैं। जिस प्रकार वनके फूलोंकी महिमाको भ्रमर प्रकाशित करते हैं, उसी प्रकार विपुल शास्त्ररूपी वनमें उन्नत–उज्जलरूप–पुष्पकी महिमाको भ्रमर अर्थात् श्रील रूप गोस्वामी प्रभुने ही जगतमें प्रकाशित किया है। उन्होंने पारकीय–भावको शास्त्रीय–युक्ति द्वारा प्रतिष्ठित किया है। अन्यथा अन्य सम्प्रदायोंके लोग श्रीराधाजीके साथ श्रीकृष्णके उपपति–भावको मानते ही नहीं थे और उससे घृणा करते थे। श्रीरामानुज सम्प्रदायके लोगोंने जयपुरमें श्रीगोविन्ददेवजीके साथ श्रीराधाजीको रखनेमें आपत्ति कर राधाजीके विग्रहको वहाँसे हटा दिया था। श्रील बलदेव विद्याभूषण प्रभुने परम रूपानुग वैष्णव अपने गुरु श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकी प्रेरणासे जयपुरमें श्रील रूप गोस्वामीके अवदान उन्नतोज्ज्वल पारकीय–भावको स्थापित कर श्रीराधाजीको श्रीकृष्णकी नित्य–शक्तिके रूपमें स्थापित किया।

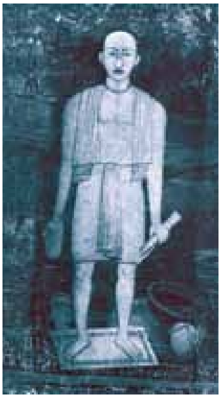

श्रील रूप गोस्वामीका अवदान वैशिष्ट्य

श्रीचैतन्य महाप्रभुके जगतमें आने पर भी व्रजप्रेमरूपी कोठरीका द्वार बन्द था। इसका कारण था कि श्रीमन्महाप्रभुके उन उत्तम भावोंको ग्रहण करनेवाले व्यक्ति जगतमें बहुत ही विरले थे। यदि श्रील रूप गोस्वामी नहीं आते, तो श्रीमन्महाप्रभु कौन हैं, महाप्रभुका विचार क्या है, परकीया–भाव क्या है, राधाजीका मान क्या है, विप्रलम्भ क्या है, सम्भोग क्या है—जगतके लोग इन सब विषयोंसे अवगत ही नहीं हो पाते। यदि श्रील रूप गोस्वामी नही आते तो श्रीवृन्दावन धाम क्या है, चैतन्य महाप्रभुकी महिमा क्या है, प्रेम क्या वस्तु है—इन सब विषयोंको कोई स्पर्श भी नहीं कर सकता था। पारकीय–भाव और उसमें भी कामात्मिका–भक्ति और तत्तत्भाव–इच्छामयी–भक्ति—इन सबका तो जगतके लोगोंको आभास तक भी नहीं था। इन समस्त भावोंको जगत्‌में प्रकाशित करना ही श्रील रूप गोस्वामीका अवदान–वैशिष्ट्य है।

श्रील रूप गोस्वामीकी हमारे पूर्वाचार्योंपर कृपा

उपरोक्त विषयोंका हम जो कुछ भी वर्णन कर पा रहे हैं, वह केवल श्रील रूप गोस्वामीकी कृपासे ही सम्भव है। हमारी गुरुपरम्पराके पूर्वाचार्यगण जैसे श्रील जीव गोस्वामी, श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर या श्रील भक्तिविनोद ठाकुर आदिने जो कुछ भी वर्णन किया है, तथा जो कुछ भी हमने श्रील सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद और श्रील गुरुदेवसे श्रवण किया है, वे सब भी श्रील रूप गोस्वामीकी कृपा ही है।

श्रील रूप गोस्वामीकी लीलाएँ और गुण सिन्धुके समान

यदि अनन्तदेव सहस्त्रों वर्षोंतक अपने सहस्त्रों मुखोंसे श्रील रूप गोस्वामीके विषयमें कहेंगे, तो भी वे उनकी महिमाका यथार्थ गान नहीं कर पायेंगे। श्रील रूप गोस्वामीकी लीलायें और उनके गुणसमूह एक महासागरके समान हैं। मैं उस सागरके तटपर खड़ा हूँ और सागरकी ओर देख रहा हूँ। यद्यपि मुझमें उसमें उतरनेकी स्पृहा तो है, किन्तु मैं उसमें उतरनेमें समर्थ नहीं हूँ। श्रील रूप गोस्वामीकी महिमा अथाह सागरके समान है, हम तो उसी सागरके तटपर खड़े होकर केवल एक–दो बूँदका स्पर्श करके ही स्वयंको कृतार्थ समझते हैं।

श्रील रूप गोस्वामीके श्रीचरणकमलोंमें प्रार्थना

श्रील रूप गोस्वामी गौड़ीय–वैष्णवोंके प्राण हैं। वे रसिक–भक्तोंके मुकुटमणि हैं। वे ही इस जगतमें श्रीमन्महाप्रभुके आन्तरिक मनोऽभीष्टके संस्थापक हैं।

हम श्रील रूप गोस्वामीके श्रीचरणकमलोंमें प्रार्थना करते हैं कि वे कृपापूर्वक हमें अपने आनुगत्यमें रखें तथा हमारे हृदयमें अपने भावोंकी स्फूर्ति करायें। श्रीरूप–मञ्जरीके आनुगत्यमें श्रीश्रीराधाकृष्ण–युगलकी सेवा ही हमारा चरम ध्येय है तथा जन्म–जन्मान्तरमें श्रीरूपके श्रीचरणोंकी धूल होना ही हमारा परम अभीष्ट है।

श्रील गुरुदेवका उपदेश

प्रतिदिन हमें अपने हृदयमें झांककर देखना चाहिए कि हम कहाँ तक श्रील रूप गोस्वामीका अनुसरण कर रहे हैं। हमें विचार करना चाहिए कि यदि मैं श्रील रूप गोस्वामीका अनुसरण नहीं कर रहा हूँ, तो मेरे जीवनको धारण करनेका वास्तवमें कोई प्रयोजन नहीं है।

श्रील रूप

(ॐ विष्णुपाद

श्रीचैतन्यमनोऽभीष्टं स्थापितं येन भूतले।
स्वयं रूपः कदा मह्यं ददाति स्वपदान्तिकम्॥
(प्रेमभक्तिचन्द्रिका मङ्गलाचरण २)

अर्थात् जिन्होंने धरातलपर श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टकी स्थापना की है, वे श्रील रूप गोस्वामी कब मुझे अपने चरणकमलोंमें स्थान प्रदान करेंगे?

श्रीचैतन्य महाप्रभुका मनोऽभीष्ट क्या है?

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ।
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वल रसां स्वभक्तिश्रियम्॥
(श्रीविदग्धमाधव १/२)

अर्थात् जिस सर्वोत्कृष्ट उज्ज्वल–रसका दान उन्होंने जगतको चिरकाल तक नहीं दिया, उसी स्वभक्तिरूपी सम्पत्तिकी 'श्री' का दान करनेके लिए वे करुणापूर्वक कलिकालमें अवतीर्ण हुए हैं।

स्वयं–अवतारी श्रीकृष्ण षडैश्वर्यशाली होनेके साथ–साथ रसिकशेखर भी हैं। उन्होंने स्वयं मधुर आदि बारह रसोंका आस्वादन तो किया, परन्तु जगज्जीवोंको उस मधुर प्रेमका दान नहीं किया। इसलिए श्रीराधाभाव और कान्तिसे सुवलित श्रीकृष्णस्वरूप अर्थात् श्रीशचीनन्दन गौरहरि उस उन्नतोज्ज्वल–रसकी 'श्री' अर्थात् शोभाको जगज्जीवोंको प्रदान करनेके लिए कृपापूर्वक कलियुगकी प्रथम सन्ध्यामें अवतीर्ण हुए। उन्नतोज्ज्वल–रस **'परकीया भाव'** है। यह परकीया भाव श्रीराधिकाजी और उनकी कायव्यूहस्वरूपा गोपियोंमें ही है। श्रीराधाजीका वह मादनाख्य भाव या उनकी कायव्यूह गोपियोंका रूढ़ आदि भाव किसी भी जीवको नहीं दिया जा सकता; किन्तु हाँ, उनके उस भावकी 'श्री'—अर्थात् शोभा जीवोंको दी जा सकती है।

ह्लादिनीशक्ति स्वरूपा श्रीराधिका प्रेमकल्पलता हैं—गोपियाँ उस प्रेमरूपी कल्पलताके पत्ते और पुष्प आदि हैं तथा उन सबकी शोभा उनकी मञ्जरियाँ हैं। जिस प्रकार पवनके झोंकोंके द्वारा हिलनेपर ये मञ्जरियाँ लताकी शोभाको और भी अधिक वर्द्धित कर देती हैं, उसी प्रकार श्रीराधिकाजीकी अन्तरङ्ग सेविकाएँ—श्रीरूपमञ्जरी आदि श्रीराधिकाजीकी शोभा हैं। उन्हीं मञ्जरियोंके भावको श्रीनाम–संकीर्तनके माध्यमसे जगज्जीवोंको प्रदान करनेके लिए ही श्रीकृष्णने श्रीचैतन्य रूपमें अवतार ग्रहण किया।

गोस्वामीका वैशिष्ट्य

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी द्वारा लिखित प्रबन्ध)

श्रीचैतन्य महाप्रभुका मनोऽभीष्ट परकीया–भावका प्रचार करना था। श्रीरूप गोस्वामीने उनके उस मनोऽभीष्टको उन्हींकी प्रेरणा और कृपासे इस जगतमें स्थापित किया है। श्रीचैतन्य महाप्रभुसे पूर्व श्रीकृष्ण और गोपियोंके इस उन्नतोज्ज्वल–परकीया–भावको लोग घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। परन्तु श्रील रूपगोस्वामीने प्रबल शास्त्रीय युक्तियोंसे श्रीकृष्णरूप नायक और गोपीरूप नायिकाओंके बीच परकीया–भावको परम–पवित्र, शुद्ध और सर्वोन्नत–रसके रूपमें स्थापित किया है।

परकीया–भाव स्थापनाकी युक्ति

श्रील रूप गोस्वामीने उज्ज्वलनीलमणि–ग्रन्थमें कहा है–

लघुत्वमत्र यत्प्रोक्तं तत्तु प्राकृतनायके।
न कृष्णे रसनिर्यासस्वादार्थमवतारिणि॥

(नायकभेद प्रकरणम् २१)

उपपति भावकी जो लघुता बतलायी गयी है, वह केवल प्राकृत नायकके सम्बन्धमें ही प्रयोज्य है–स्वयं श्रीकृष्णके सम्बन्धमें नहीं। श्रीकृष्ण धर्म–अधर्मके नियन्ता एवं अवतारोंके भी चूड़ामणि सर्व–अवतारी हैं। जब अवतारोंके ऊपर ही धर्म–अधर्मका नियामकत्व नहीं रहता, तब अवतारी श्रीकृष्णके प्रति उसकी सम्भावना कैसे हो सकती है? श्रीकृष्ण द्वारा उपपति भाव ग्रहण करनेका कारण है–रसनिर्यास (रसके सारको) आस्वादन करनेकी अभिलाषा। श्रीकृष्ण सर्वकारणकारण, सबके आदि, स्वयं अनादि, सर्वशक्तिमान् और अखिलरसामृत–सिन्धु हैं; तथा गोपियाँ (श्रीब्रह्मसंहिता ५/३७)–**'आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभिः ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः'** हैं। आनन्दचिन्मयरस अर्थात् परमप्रेममय उन्नतोज्ज्वल नामक रसमें निमग्न स्वरूपवाली एवं निज–स्वरूप अर्थात् श्रीकृष्ण–स्वरूप होनेके कारण ह्लादिनी–शक्तिकी वृत्तिरूपा हैं। फिर ऐसे श्रीकृष्ण जहाँ नायक हैं और ऐसी गोपियाँ जहाँ नायिकाएँ हैं, तब उस परकीया–भावमें दोष कैसे हो सकता है?

विविध प्रमाण

गोपालमंत्रमें—'**गोपीजनवल्लभाय स्वाहा**' (श्रीगोपालतापनी पूर्व ३)—पदमें 'गोपीजनवल्लभ' शब्द परकीया–भावका ही द्योतक है।

श्रील रूप गोस्वामीने श्रीउज्ज्वलनीलमणि ग्रन्थके अतिरिक्त अपने विदग्ध–माधव और ललित–माधव नामक नाटक ग्रन्थोंमें, हंसदूत, दानकेलिकौमुदी आदि ग्रन्थोंमें भी गोपियोंके परकीया–भावका उल्लेख किया है।

जो परकीया भावको स्वीकार नही करते उनके प्रति श्रीलरूप गोस्वामीका खेद!

किसी–किसी सम्प्रदायमें श्रीश्रीराधाकृष्णके नित्य मिलन और विहारको ही स्वीकार किया जाता है। वे लोग प्रछन्न–कामुकता, विरह–विच्छेद, मान, अभिसार, दुर्लभता और निवारण आदिको नहीं मानते, गोपियोंके परकीया–भावके प्रति साधारण नायक–नायिकाओंकी भाँति सामान्य–बुद्धि रखते हैं तथा परकीया भावको दुराचारके रूपमें दर्शन करते हैं—ऐसे व्यक्ति श्रीरूप गोस्वामीके विचारसे दुराशय हैं! जैसा कि उन्होंने उल्लेख किया है—

आः किं वान्यद्यतस्तस्यामिदमेव महामुनिः।
जगौ पारमहंस्याञ्च संहितायां स्वयं शुकः॥

(श्रीउज्ज्वलनीलणमणिः ३/२२)

श्रील रूप गोस्वामी इस श्लोकमें 'आः' पदका प्रयोगकर अत्यन्त खेदके साथ कह रहे हैं कि पारमहंसी संहितामें स्वयं महामुनि श्रीशुकदेवजीने व्रज–गोपियोंकी परकीय महिमाका उच्च–स्वरसे गान किया है। यह पारमहंसी संहिता सर्वप्रथम भगवान् नारायणके द्वारा चतुःश्लोकीके रूपमें लोक पितामह ब्रह्माजीके निकट प्रकाशित हुई तथा नारायण–स्वरूप परमहंस श्रीव्यासदेव द्वारा लिखी गयी है। परमहंसकुलचूड़ामणि श्रीशुकदेवजीके द्वारा यह संहिता मृत्युके लिए प्रस्तुत महाराज परीक्षित्की सभामें देवर्षि श्रीनारदजी, श्रीवशिष्ठजी, श्रीपराशरजी, श्रीवेदव्यासजी जैसे गुरुवर्ग—महातत्त्व–ज्ञानी, रसिक, मुक्तकुलचूड़ामणि महापुरुषोंकी उपस्थितिमें उच्च स्वरसे गान की गयी तथा उसी समय इस पारमहंसी संहिता—श्रीमद्भागवतके व्याख्यानमें इस परकीया–भावका भी पाठ किया गया। इसके वक्ता और श्रोता क्रमशः श्रीशुकदेवजी और महाराज

परिक्षित्; श्रीसूतजी और शौनकादि मुनि; विदुर और मैत्रेय मुनि—सभी मुक्तपुरुष या महापुरुष हैं। अतः यह परकीया–भाव कदापि निन्दनीय या घृणित नहीं हो सकता।

श्रीलरूप गोस्वामी द्वारा भक्तिका भक्तिरसके रूपमें स्थापन

श्रीमन् महाप्रभुसे पूर्व वैष्णव–सम्प्रदायोंमें वैधी भक्ति तो थी, परन्तु भक्तिरस नहीं था। श्रील रूपगोस्वामीने ही उस भक्तिको भक्तिरसके रूपमें स्थापित किया। उन्होंने रति या स्थायीभावके साथ आलम्बन और उद्दीपन रूप विभाव, सात्त्विक भाव, अनुभाव और संचारी आदि भावोंके मिलनसे किस प्रकार शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर (शृंगार) ये पाँच मुख्य रस तथा हास्य, अद्भुत, करुण, वीर, रौद्र, भयानक, वीभत्स ये सात गौण भक्तिरस होते हैं—इनका उदाहरणके साथ वर्णन किया है, जो अन्यत्र कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता है।

श्रीरूप मञ्जरीकी तुलनामें श्रीरूप गोस्वामीका अधिक वैशिष्ट्य

श्रील रूप गोस्वामी श्रीकृष्ण–लीलामें श्रीरूपमञ्जरी हैं। उस लीलामें वे नित्य किङ्करीरूपमें निभृत–कुञ्जोंमें

युगलकी सेवा तो करते हैं, परन्तु उस किङ्करी भावको कैसे प्राप्त किया जा सकता है, उसकी प्रक्रियाको वे किसीको नहीं बताते हैं। परन्तु श्रीरूप गोस्वामीके रूपमें उन्होंने बतलाया है—

कृष्णं स्मरन् जनं चास्य प्रेष्ठं निजसमीहितम्।
तत्तत्कथारतश्चासौ कुर्याद्वासं व्रजे सदा॥
(श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु १/२/२९४)

अर्थात् श्रीकृष्णका स्मरण और उनकी सेवा करनेवाले साधक या साधिकाको—सख्य, वात्सल्य या शृंगार भावयुक्त रागात्मिक जनोंमेंसे जिस किसीकी सेवाके प्रति लोभ हो, उनका भी स्मरण करते हुए सदैव व्रजमें वासकर अपनी सिद्धदेहसे उस रागात्मिक जनके आनुगत्यमें युगलकी सेवा करनी होगी तथा सदा—सर्वदा युगलकी कथा—रसमें निमग्न होना होगा, इसीसे उस अभीष्ट भावको प्राप्त किया जा सकता है। विशेषकर गोपियोंके आनुगत्यके बिना उस पारकीय—भावकी प्राप्ति नहीं हो सकती।

परकीया–भाव कदापि निन्दनीय या घृणित नहीं हो सकता।

श्रीरूप मञ्जरीसे भी श्रीरूप गोस्वामीका वैशिष्ट्य अधिक है। श्रीरूप गोस्वामीके जीवन और लेखनीसे जगतका अधिक उपकार हुआ है।

यदि श्रीरूप गोस्वामी इस जगत्में नही आते!

यङ् कलि रूप शरीर न धरत।
तङ् व्रज प्रेम महानिधि कुठरीक
कोन कपाट उघाड़त॥
को जानत मधुर वृन्दावन
को जानत व्रजनीत।
को जानत राधामाधव—रति
को जानत सोई प्रीत॥

तात्पर्य यह है कि यदि श्रीरूप गोस्वामी इस जगतमें नहीं आते, तो व्रज—प्रीति रूप महानिधिकी रीति—परकीया—भावको इस जगतमें कौन प्रकाशित करता? उनकी कृपाके बिना कौन मथुरा—वृन्दावनके माधुर्यको तथा व्रजदेवियोंकी महिमाको जान पाता? तथा कौन राधा—माधवके भाव और उनकी प्रीतिको जान पाता?

श्रीलरूप गोस्वामी श्रीमन्महाप्रभुके मनोऽभीष्टको जाननेवाले

श्रीगौरहरि रथयात्राके समय साहित्य दर्पणका एक श्लोक उच्चारण कर रहे थे, उसका तात्पर्य एकमात्र स्वरूप दामोदर ही जानते थे, दूसरा कोई नहीं। परन्तु श्रीरूप गोस्वामीने श्रीमन्महाप्रभुके मनोऽभीष्टको जानकर उस श्लोकका रहस्यपूर्ण तात्पर्य स्वरचित श्लोकमें किया। इसपर श्रीमन्महाप्रभुने उनकी पीठ थपथपायी। साहित्य दर्पणका श्लोक इस प्रकार है—

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपा
ते चोन्मीलित मालती सुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बनीलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरत व्यापार लीलाविधौ
रेवा रोधसि वेतसी तरुतले चेतः समुत्कण्ठते॥

(श्रीपद्यावली ३८६)

जिन्होंने कौमार—कालमें रेवा नदीके तीरपर मेरा चित्त चुरा लिया था, अब वे ही मेरे पति हुए हैं; वही मधुमास—चैत्र महीनेकी रात भी उपस्थित है; खिले हुए मालती—पुष्पोंकी सुगन्ध भी है; कदम्ब—काननके सौरभसे सुवासित मधुर वायु भी मृदु—मन्दगतिसे प्रवाहित हो रही है और सुरत—लीलाके कार्यमें मैं वही नायिका भी उपस्थित हूँ; तथापि इस अवस्थामें भी मेरा मन सन्तुष्ट नहीं हो रहा है, वह (मन) तो रेवा—नदीके तटस्थित बेंतके वनमें कदम्ब वृक्षकी छायाके लिए उत्कठित हो रहा है।

श्रीरूप गोस्वामी द्वारा रचित श्लोक इस प्रकार है—

प्रियः सोऽयं कृष्णः सहचरी कुरुक्षेत्र मिलित—
स्तथाहं सा राधा तदियं उभयो सङ्गसुखम्।
तथाप्यन्तः खेलन् मधुर मुरली पञ्चम जुषे
मनो मे कालिन्दी पुलिन विपिनाय स्पृहयति॥

(श्रीपद्यावली ३८७)

हे सखि! मेरे प्राण—प्रियतम वही श्रीकृष्ण आज कुरुक्षेत्रमें मिले हैं, मैं भी वही राधा हूँ और हम दोनोंका मिलन सुख भी वही है; तथापि वन (वृन्दावन) में क्रीड़ा कर रहे इन्हीं श्रीकृष्णकी मुरलीके पञ्चम स्वरकी तानसे आनन्द—प्लावित कालिन्दीके पुलिनपर स्थित वन (वृन्दावन) के लिए मेरा मन अभिलाषा कर रहा है।

गोविन्द विरुदावली

श्रीरूप गोस्वामीके द्वारा रचित गोविन्द विरुदावलीके पदोंका अर्थ बड़ा ही गूढ़ है। बड़े—बड़े दिग्गज पण्डित भी उनका अर्थ समझ नहीं पाते। उनमें अनुप्रास आदि—विविध प्रकारकी अद्भुत अलङ्कार वैचित्री दृष्टिगोचर होती है।

भक्तिके सोपानोंकी विश्लेषणात्मक परिभाषा

श्रीरूप गोस्वामीने भक्तिरसामृतसिन्धु और उज्ज्वल—नीलमणि ग्रन्थोंमें उत्तमा भक्ति एवं उसके प्रथम सोपान श्रद्धासे लेकर, निष्ठा, रुचि, आसक्ति, रति, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव और मादन आदिकी जो परिभाषाएँ दीं हैं, वह और कहीं भी उपलब्ध नहीं है। दूसरे—दूसरे सम्प्रदायोंके विद्वान् भी उन—उन परिभाषाओंका अपने भाषणों या प्रबन्धोंमें उल्लेख करते हैं। वह परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

उत्तमा—भक्तिकी परिभाषा—
अन्याभिलाषिता शून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा॥

(भ॰र॰सि॰ १/१/११)

श्रीकृष्ण तथा उनसे सम्बन्धित वस्तु और व्यक्तिके प्रति अनुकूल भाव सहित अनुशीलन यदि निर्भेद ब्रह्मज्ञानकी आसक्ति, सकाम और निष्काम कर्मकी आसक्ति, वर्णाश्रम और योगकी आसक्तिके मिश्रणसे रहित एवं श्रीकृष्ण और कृष्णभक्तिके अतिरिक्त अन्य कामनाओंसे शून्य हो तब उस अनुशीलनको उत्तमा—भक्ति कहा जाता है।

श्रीरूप गोस्वामीने भक्तिरसामृतसिन्धु और उज्ज्वल-नीलमणि ग्रन्थोंमें उत्तमा भक्ति एवं उसके प्रथम सोपान श्रद्धासे लेकर, निष्ठा, रुचि, आसक्ति, रति, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव और मादन आदिकी जो परिभाषाएँ दीं हैं, वह और कहीं भी उपलब्ध नहीं है।

साधनकी परिभाषा—
कृति साध्या भवेत् साध्यभावा सा साधनाभिधा।
नित्यसिद्धस्य भावस्य प्राकट्यं हृदि साध्यता॥
(भ०र०सि० १/२/२)

श्रवण—कीर्त्तनादि रूपसे जड़—इन्द्रियोंकी चेष्टा द्वारा जो भक्ति साधनीयके रूपमें प्रतिभात होती है, उसे 'साधन भक्ति' कहते है। ऐसी साधन—भक्ति द्वारा भाव—भक्ति और प्रेम—भक्ति साध्य होती है। उपरोक्त वाक्यसे ऐसा नहीं समझना चाहिए कि इन्द्रियोंकी क्रियाओंके द्वारा भक्ति उत्पन्न होती है, क्योंकि भक्ति तो शुद्ध—आत्माका नित्यसिद्ध स्वभाव है। श्रवण—कीर्त्तनादि द्वारा चित्तमें उस नित्यसिद्ध—भावको उदय करानेमें सहायता करनेका नाम ही साधन है।

रतिकी परिभाषा—
शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्यांशु साम्यभाक्।
रुचिभिश्चित्तमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते॥
(भ०र०सि० १/३/१)

जो भक्ति शुद्धसत्त्व स्वरूप, प्रेमरूप सूर्यकी किरणके सादृश्ययुक्त (समान) तथा रुचि द्वारा चित्तको आद्रित (द्रवीभूत) करनेवाली है, उसे भाव भक्ति कहते हैं।

प्रेमकी परिभाषा—
अनन्यममता विष्णौ ममता प्रेमसङ्गता।
भक्तिरुच्यते भीष्मप्रह्लादोद्धवनारदै:॥
(भ०र०सि० १/४/२)

अन्य सभीके प्रति ममता रहित होकर एकमात्र श्रीविष्णुके प्रति प्रेमयुक्त ममताको भीष्म, प्रह्लाद, उद्धव और नारद आदि महाजन भक्ति या प्रेम कहते हैं।

सर्वथा ध्वंसरहितं यद्यपि ध्वंसकारणे।
यद्भावबन्धनं युनो स प्रेमा परिकीर्तिता:॥
(उज्ज्वलनीलमणि १४/६३)

प्रेमके ध्वंस होनेका कारण विद्यमान होनेपर भी जो प्रेम सर्वथा ध्वंस नहीं होता, श्रीश्रीराधाकृष्ण युगलके ऐसे परस्पर प्रेम—बन्धनका नाम ही प्रेम है।

सम्यक् मसृणित स्वान्तो ममता अतिशयाङ्किता।
भाव स एव सान्द्रात्मा बुधे प्रेमा निगद्यते॥
(भ०र०सि० १/४/१)

भावके अत्यन्त गाढ़ होने पर पण्डितजन उसे प्रेम कहते हैं। यह अन्त:करणको सम्यक् रूपसे द्रवीभूत करता है तथा प्रेमके पात्रमें अत्यधिक ममताको उत्पन्न करता है।

इसी प्रकार श्रील रूप गोस्वामीने स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव, मादन आदिकी परिभाषाओंका भी उल्लेख किया है, जो आजतक अन्य किसीने भी नहीं किया है। दूसरे सम्प्रदायोंके विद्वान् यहाँतक कि अद्वैतवादी—मायावादी भी श्रील रूप गोस्वामीके ग्रन्थोंसे इन परिभाषाओंको उदाहरणके रूपमें उल्लेख करते हैं।

उपसंहार

आददानस्तृणं दन्तैरिदं याचे पुन: पुन:।
श्रीमद्रूपपदाम्भोजधूलि: स्यां जन्मजन्मनि॥
(श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी)

मैं दाँतोंमें तृण धारणकर दीनतापूर्वक पुन: पुन: यही प्रार्थना करता हूँ कि मैं जन्म—जन्मान्तरोंमें श्रीरूप गोस्वामीके चरणकमलोंकी धूल बन जाऊँ।

(श्रीश्रीभागवत—पत्रिका वर्ष—४, संख्या—७—८, २००७ ई०)

श्रील रूप गोस्वामीका

(ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी द्वारा

मङ्गलाचरण

श्रीचैतन्य मनोऽभीष्टं स्थापितं येन भूतले।
स्वयं रूपः कदा मह्यं ददाति स्वपदान्तिकम्॥

(प्रेमभक्तिचन्द्रिका मङ्गलाचरण २)

अर्थात् श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको जिन्होंने भूतलपर (इस जगत्में) स्थापित किया था, वे श्रीरूप गोस्वामी कब मुझे अपने चरणोंमें स्थान प्रदान करेंगे।

(मुक्ताचरित उपसंहार १)

अर्थात् दाँतोंमें तृण धारण करते हुए अर्थात् अत्यन्त दीनतापूर्वक मैं जन्म–जन्मान्तरों तक श्रीरूप गोस्वामीके चरणोंकी धूल बननेकी पुनः पुनः प्रार्थना करता हूँ।

श्रीरूप मञ्जरीसे श्रील रूप गोस्वामीकी दयाका वैशिष्ट्य

श्रीकृष्णलीलाकी श्रीरूप मञ्जरी ही श्रीगौरलीलामें श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको पूर्ण करनेवाले श्रीरूप गोस्वामी हैं। श्रीरूप मञ्जरी राधिकाजीकी सर्वश्रेष्ठ सेविका हैं और राधापक्षीय हैं। उनका स्थायी भाव, रसोल्लास रति है और उनके लिए कहा गया है—

श्रीरूपमञ्जरिकरार्चितपादपद्म–
गोष्ठेन्द्रनन्दनभुजार्पितमस्तकायाः।

कुछ वैशिष्ट्य

लिखित प्रबन्ध)

©Śāradā dāsī

हा मोदतः कनकगौरि पदारविन्द–
सम्वाहनानि शनकैस्तव किं करिष्ये॥

(विलापकुसुमाञ्जलि ७५)

अर्थात् विहारके पश्चात् क्लान्त श्रीमती राधिका श्रीकृष्णकी गोदमें सिर रखकर लेटी हुई हैं। श्रीकृष्ण अपने सुकोमल, सुगन्धित हस्तकमलोंसे उनके केशोंको धीरे–धीरे सहला रहे हैं तथा अपनी सुकोमल अंगुलियोंसे उनके उलझे हुए केशोंको सुलझा रहे हैं। उस समय श्रीरूप मञ्जरी अपनी ईश्वरीके जिन

सुकोमल श्रीचरणोंको अपनी गोदमें रखकर प्रेमसे सेवा करती हैं, क्या वे श्रीरूपमञ्जरी इङ्गितसे मुझे बुलाकर उन्हीं श्रीचरणोंकी सेवामें नियुक्त करेंगी? अहा! उन श्रीचरणोंको धीरे–धीरे सम्वाहन करनेका परम दुर्लभ सुअवसर मुझे कब प्राप्त होगा?

ताम्बूलार्पणपादमर्दनपयोदानाभिसारादिभि–
वृन्दारण्यमहेश्वरीं प्रियतया यास्तोषयन्ति प्रियाः।
प्राणप्रेष्ठसखीकुलादपिकिलासङ्कोचिता भूमिकाः
केलीभूमिषु रूपमञ्जरिमुखास्तादासिकाः संश्रये॥

(व्रजविलासस्तव ३८)

अर्थात् जो ताम्बूल प्रदान करने, चरण दबाने, जल देने और अभिसार कराने आदि कार्योंके द्वारा प्रेमपूर्वक श्रीवृन्दावनकी ईश्वरी श्रीमती राधिकाको नित्य सन्तुष्ट रखती हैं, उन प्राणप्रेष्ठ सखियोंकी अपेक्षा भी सेवाकार्यमें निसंकोच भावको प्राप्त हुई श्रीमती राधिकाजीकी श्रीरूपमञ्जरी आदि प्रमुख दासियोंका मैं आश्रय ग्रहण करती हूँ।

श्रीरूपमञ्जरी एवं उनकी अनुगत मञ्जरियोंमें एक विशेषता है कि श्रीश्रीराधाकृष्णकी निभृत–निकुञ्ज सेवामें भी ये निसंकोच आ–जा सकती हैं और युगलकी सेवा कर सकती हैं। यहाँ तक कि जब श्रीकृष्ण और श्रीराधाजीके वस्त्र अस्त–व्यस्त रहते हैं, उस अवस्थामें भी मञ्जरियोंको वहाँपर प्रवेश करनेका और उनकी सेवा करनेका अधिकार है। किन्तु यह सौभाग्य उनसे श्रेष्ठ ललिता, विशाखा आदि प्रियनर्म सखियोंको भी प्राप्त नहीं है, जो श्रीरूप मञ्जरी आदिकी अनुमतिके बिना उस निभृत–निकुञ्जमें नहीं पहुँच सकतीं। श्रीरूपमञ्जरीका इतना अधिक वैशिष्ट्य है, फिर भी उन्होंने (श्रीरूपमञ्जरीने) ऐसी सेवाको प्राप्त करनेका साधन जीवोंके लिए उपदेश नहीं किया। किन्तु श्रीरूप गोस्वामीके रूपमें उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्टको पूर्णकर

भक्तिरसामृत–सिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि, विदग्धमाधव, ललितमाधव आदि ग्रन्थोंकी रचना कर हमारे जैसे जीवोंका परम कल्याण किया है तथा इन ग्रन्थोंके माध्यमसे यह बतलाया है कि हम उस परम रसमयी उल्लासमयी रतिवाले मञ्जरी भावको कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए श्रील रूप गोस्वामीका यह कार्य जीवोंके कल्याणकी दृष्टिसे अनुपम और अद्भुत है। इन ग्रन्थोंके रूपमें हमलोग आज भी श्रीरूप गोस्वामीकी दयाका अनुभव करते हैं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि जितने भी रूपानुग या रागानुग वैष्णव हैं तथा दूसरे–दूसरे सम्प्रदायोंके वैष्णव हैं, वे सभी श्रील रूप गोस्वामीके इस उपकारके लिए उनके चिर ऋणी हैं।

> **जितने भी रूपानुग या रागानुग वैष्णव हैं तथा दूसरे–दूसरे सम्प्रदायोंके वैष्णव हैं, वे सभी श्रील रूप गोस्वामीके उपकारके लिए उनके चिर ऋणी हैं।**

महाप्रभुके अनुरूप श्रीरूप

प्रियस्वरूपे दयितस्वरूपे
प्रेमस्वरूपे सहजाभिरूपे।
निजानुरूपे प्रभुरेकरूपे
ततान रूपे स्वविलासरूपे॥

(चै॰च॰मध्य॰ १९/१२१)

श्रील कवि कर्णपूरने श्रील रूप गोस्वामीके चरितका वर्णन करते हुए उनके विषयमें यह श्लोक लिखा है।

प्रियस्वरूपे—श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामी जिनके प्रिय हैं, उन श्रील रूप गोस्वामीमें, अथवा श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामीके प्रिय श्रील रूप गोस्वामीमें, अथवा अपने (श्रीमन्महाप्रभुके) अत्यन्त प्रिय श्रील रूप गोस्वामीमें, अथवा स्वयंरूप (श्रीकृष्ण) की सर्वोत्कर्षताको निरूपित करनेवाले श्रील रूप गोस्वामीमें; **दयितस्वरूपे**—अपने दयित अर्थात् प्रिय भक्तोंके स्वरूप–तुल्य श्रील रूप गोस्वामीमें; **प्रेमस्वरूपे**—प्रेमके ही स्वरूप श्रील रूप गोस्वामीमें; **सहजाभिरूपे**—स्वभाविक मनोहर रूप वाले श्रील रूप गोस्वामीमें; **निजानुरूपे**—प्रेम–प्रचारमें अपने अनुरूप या समान श्रील रूप गोस्वामीमें; **एकरूपे**—अपने ही समान रूपवाले श्रील रूप गोस्वामीमें; **प्रभु**—श्रीमन्महाप्रभुने; **स्वविलासरूपे**—अपने विलास स्वरूप अथवा श्रीकृष्णके विलासतत्त्वका निरूपण करनेवाले; **रूपे**—श्रील रूप गोस्वामीमें; [प्रेम—प्रेमभक्तिका]; **ततान**—विस्तार किया है, अर्थात् उनके हृदयमें प्रेरणा एवं शक्ति–सञ्चारित की है, जिससे उन्होंने भक्तिरसशास्त्रोंकी रचना की है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा श्रील रूप गोस्वामीमें प्रेरणा

श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीको प्रेरणा देकर उनसे अपने मनोऽभीष्ट कार्यको पूर्ण करवाया। किस प्रकार प्रेरणा दी? उसके लिए कहते हैं—प्रयागमें श्रीमन्महाप्रभुजीने श्रीरूप गोस्वामीको दस दिनों तक शिक्षा दी, और उसमें उन्होंने कहा—

पारापारशून्य गभीर भक्तिरससिन्धु।
तोमाय चाखाइते तार कहि एक बिन्दु॥

(चै॰च॰मध्य॰ १९/१३७)

अर्थात् भक्तिरस–सागर आर–पार रहित, सीमा रहित, अत्यन्त गहरा और अथाह है, मैं तुम्हें उसकी एक बिन्दु चखानेके लिए संक्षेपमें कुछ बतला रहा हूँ।

श्रीजगन्नाथ पुरीमें भी श्रीमन्महाप्रभुने अपने परिकरोंसे कहा था—हे स्वरूप दामोदर, राय रामानन्द, नित्यानन्द! अद्वैताचार्य! आपलोग रूपके ऊपर कृपा कीजिए, जिससे यह मेरे हृदयके भावोंको जानकर मेरा मनोऽभीष्ट पूर्ण कर सके।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा सर्वप्रथम श्रीमन्महाप्रभुके तत्त्वकी जगतमें घोषणा

श्रीराधाभाव और कान्ति सुवलित श्रीकृष्ण ही श्रीमन्महाप्रभु हैं, श्रील रूप गोस्वामीने ही जगतमें इसकी सर्वप्रथम घोषणा की। यद्यपि श्रीरायरामानन्द, सार्वभौम भट्टाचार्य, तपन मिश्र आदि भक्तोंने महाप्रभुके श्रीकृष्ण स्वरूप, रसराज महाभाव स्वरूप और षड्भुज रूप आदिका दर्शन किया था, परन्तु उन लोगोंने श्रीचैतन्य महाप्रभुके आदेशके कारण स्पष्ट रूपसे इस तत्त्वको जगतमें प्रकाशित नही किया। श्रील रूप गोस्वामीने ही सर्वप्रथम श्रीजगन्नाथ पुरी धाममें भक्तसमाजमें स्पष्ट रूपसे इस तत्त्वकी घोषणा की। जब श्रीरायरामानन्दने श्रीरूप गोस्वामीको विदग्धमाधवके नान्दीमुखी[१] श्लोकको पढ़नेके लिए कहा, तो श्रीरूप गोस्वामी बड़े लज्जित हुए। किन्तु बार–बार श्रीमन्महाप्रभु तथा अन्य भक्तोंके कहने पर उन्होंने इस श्लोकको पढ़ा—

अनर्पितचरी चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ
समर्पयितुं उन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियं।
हरिः पुरटसुन्दरद्युति कदम्बसन्दीपितः
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः॥

(चै॰च॰आदि॰ १/४)

अर्थात् सुवर्ण कान्तिसमूह द्वारा देदीप्यमान श्रीशचीनन्दन गौरहरि तुम्हारे हृदयमें स्फुरित हों। उन्होंने जिस सर्वोत्कृष्ट उज्ज्वल रसका दान बहुत दिनों तक जगतको नहीं किया, अपनी उसी भक्तिरूपी सम्पत्तिकी शोभाका दान करनेके लिए वे करुणापूर्वक कलियुगमें अवतीर्ण हुए हैं।

यहाँ श्रीकृष्ण ही राधा–भाव–कान्ति द्वारा देदीप्यमान श्रीशचीनन्दन गौरहरि हैं, इसको स्पष्ट रूपसे श्रील रूप गोस्वामीने बतलाया है।

शुनि प्रभु कहे एइ अति स्तुति हइल।

(चै॰च॰अन्त्य॰ १/१३१)

अर्थात् इसे सुनकर महाप्रभुने कहा—यह अति–स्तुति है।

सब भक्तोंने कहा—

कृतार्थ करिला सबाय श्लोक सुनाञा।

(चै॰च॰अन्त्य॰ १/१३३)

किन्तु सब भक्तोंने श्लोकको सुनकर आनन्दित होकर कहा—ओह! रूप! तुमने इस श्लोकको हमें सुनाकर कृतार्थ कर दिया।

ललितमाधव नाटकमें इष्टदेवके वर्णन प्रसङ्गमें श्रील रूप गोस्वामीने नान्दीमुखी श्लोकके द्वारा वर्णन किया है—

निजप्रणयितां सुधामुदयमाप्नुवन् यः क्षितौ
किरत्यलमुरीकृतद्विजकुलाधिराजस्थितिः।
स लुश्ति–तमस्ततिर्मम शचीसुताख्यः शशी
वशीकृतजगन्मनाःकिमपि शर्म विनस्यतु॥

(चै॰च॰अन्त्य॰ १/१७७)

अर्थात् जिन्होंने भूतलपर (इस जगतमें) प्रकट होकर अपनी प्रणय–रस–सुधाका विस्तार किया है, वे श्रीकृष्णस्वरूप ही द्विजकुलके सम्राट्–श्रीशचीनन्दनके रूपमें प्रकट होकर जगतके समस्त अन्धकाररूपी तमको दूरकर जगत्वासियोंके मनको वशीभूत करनेवाले हैं, ऐसे श्रीशचीनन्दन हमारा कल्याण करें।

इस श्लोकको सुनकर भी श्रीमन्महाप्रभु रोषाभास सहित कह उठे—

काँहा तोमार कृष्णरस–काव्य–सुधा–सिन्धु।
तार मध्ये मिथ्या केने स्तुति–क्षारबिन्दु॥

(चै॰च॰अन्त्य॰ १/१७९)

अर्थात् महाप्रभुने कहा—कहाँ तो तुम्हारा यह कृष्णरस–काव्य अमृतका महासागर, किन्तु उसमें

---

१ आशीर्वादात्मक मङ्गलाचरण

मेरी स्तुति रूपी क्षार (खार) बिन्दुको तुमने क्यों मिला दिया?

राय कहे—रूपेर काव्य अमृतेर पूर।
तार मध्ये एक बिन्दु दियाछे कर्पूर॥

(चै॰च॰अन्त्य॰ १/१८०)

रायने कहा—रूपका काव्य तो अमृतका भण्डार है। उन्होंने उसमें कपूरकी एक बूँद मिला दी है, जिससे उस रसकी सुगन्ध और आस्वादन बढ़ जाय।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा भक्तिरसकी स्थापना

श्रीचैतन्य महाप्रभुके जगतमें प्रकट होनेसे पूर्व भक्ति तो थी, परन्तु भक्तिरस नही था। श्रीरामानुज, श्रीमध्व आदि पूर्व–पूर्व वैष्णव आचार्योंने वैधी–भक्तिके साधन द्वारा सिद्ध अवस्थामें वैकुण्ठीय–ऐश्वर्य–प्रेमकी ही प्राप्तिका मार्ग दिखलाया। परन्तु श्रीमन्महाप्रभुकी प्रेरणासे श्रील रूप गोस्वामीने अपने रचित भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि आदि ग्रन्थोंमें भक्तिरसका विचार दिया है। स्थायी भाव, उसके ऊपर अनुभाव, सात्त्विक, सञ्चारी आदिके यथायोग्य मिलनसे भक्तिरस होता है। श्रील रूप गोस्वामीने इसका अत्यन्त अनुपम सुन्दर विवेचन प्रस्तुत किया है, जिसके द्वारा व्रज–प्रेम–माधुरीकी प्राप्ति होती है।

श्रीचैतन्य मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रीलरूप गोस्वामी

श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्ट अर्थात् गोपियों द्वारा अखिलरसामृतसिन्धु श्रीकृष्णकी परकीया भावसे सेवा—इसको श्रील रूप गोस्वामीने ही इस जगतमें स्थापित किया है। इन व्रजगोपियोंकी सेवाकी परिपाटीका प्रचार करना ही श्रीचैतन्य महाप्रभुका मनोऽभीष्ट था। श्रीमद्भागवतमें व्रजरमणियोंके परकीया–भावका यथेष्ट वर्णन रहने पर भी श्रीचैतन्य महाप्रभुसे पूर्व लोकसमाज और भक्तसमाजमें परकीया–भावसे उपासनाको घृणित समझा जाता था। श्रीचैतन्य महाप्रभु इस पारकीय–भावकी उपासनाको ही जगतमें देनेके लिए आये थे। **'समर्पयितुं उन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम्'**—उन्नत–उज्ज्वल–रस परकीया–रस या परकीया–भाव है। स्वभक्ति—'स्व' श्रीमती राधिकाके अन्तर स्थित जो भक्तिके गूढ़ भाव हैं अर्थात् श्रीराधाजीका भाव और उसकी 'श्री' अर्थात् शोभा अर्थात् मञ्जरी–भाव, जगतमें इसको देनेके लिए ही श्रीचैतन्य महाप्रभुका आविर्भाव हुआ है। किन्तु **'राधायाः प्रणयमहिमा'**—श्रीराधाजीकी प्रणय महिमा इत्यादि जो तीन भाव हैं, उन्हें देनेके लिए नहीं, क्योंकि ये तीन भाव श्रीमन्महाप्रभुके स्वयंके आस्वादनके विषय थे। अतएव श्रीचैतन्य महाप्रभु जगत–जीवोंको उपरोक्त मञ्जरी भावको दान करनेके लिए ही करुणापूर्वक अवतीर्ण हुए। श्रीरूप गोस्वामीने श्रीमन्महाप्रभुकी प्रेरणासे शास्त्रीय प्रमाणोंके आधार पर विद्वत् और भक्तसमाजमें इस परकीया–भावकी प्रतिष्ठाकर श्रीचैतन्य मनोऽभीष्टकी स्थापना की है।

श्रीरूप गोस्वामीने श्रीमन्महाप्रभुकी प्रेरणासे शास्त्रीय प्रमाणोंके आधार पर विद्वत् और भक्तसमाजमें इस परकीया-भावकी प्रतिष्ठाकर श्रीचैतन्य मनोऽभीष्टकी स्थापना की है।

उन्नतोज्ज्वल–पारकीय–भावकी प्रतिष्ठा—श्रील रूप गोस्वामीका एक परम उन्नत वैशिष्ट्य

श्रीरूप गोस्वामीने भक्तिरसामृतसिन्धुमें शान्त, दास्य, सख्य और वात्सल्य रसोंके साथ मधुर रसका संक्षेपमें वर्णन किया है, क्योंकि (१) दास्य, सख्य और वात्सल्य रसोंके उपासकोंके लिए भी यह मधुर रस दुरूह होनेके कारण उपयोगी नहीं है। अतः इस मधुर–रसके उपासक बहुत विरले होते हैं। (२) बहुतसे जीवोंकी

मधुर–रसमें रुचि रहनेपर भी उनके पूर्व एवं वर्तमान जन्मके संस्कार नहीं रहनेसे उनके लिए भी मधुर–रस उपयोगी नहीं है। (३) रागमार्गका वर्णन करना तथा उसमें भी पारकीय–भावका वर्णन करना ही उज्ज्वलनीलमणि ग्रन्थका विषय है। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकारके अवान्तर (विभिन्न) स्वभाववाले व्यक्ति हैं, ऐसे विविध प्रकारके व्यक्तियोंके लिए भी इस परमोच्च रागमार्गका तथा औपपत्य–भावका रहस्य अपरिचित रहनेसे उनका चित्त वैधी–भक्तिमें ही आविष्ट रहनेके कारण उनके लिए भी मधुर–रस अनुपयोगी एवं दुरूह है। इसलिए श्रील रूप गोस्वामीने भक्तिरसामृतसिन्धुमें मधुर रसका संक्षेपमें वर्णनकर उज्ज्वलनीलमणिमें ही इसका विस्तृत रूपसे वर्णन किया है। अतः विद्वत् समाजमें उन्नतोज्ज्वल–पारकीय–भावकी प्रतिष्ठा श्रील रूप गोस्वामीका एक परम उन्नत वैशिष्ट्य है।

> **विद्वत् समाजमें उन्नतोज्ज्वल–पारकीय–भावकी प्रतिष्ठा श्रील रूप गोस्वामीका एक परम उन्नत वैशिष्ट्य है।**

अमल पुराण श्रीमद्भागवतके अनुसार अप्राकृत नायक और नायिकामें परकीया भाव घृणित या नारकीय नहीं

श्रील रूप गोस्वामीने शास्त्रोंके आधार पर, विशेष करके श्रीमद्भागवतके आधार पर गोपियोंके परकीया–भावको और श्रीकृष्णको उपपतिके रूपमें प्रमाणित किया है। यही मुख्य प्रमाण है कि गोपियोंका यह औपपत्य भाव अत्यन्त पवित्र था। यहाँपर यह विशेष विचारणीय है कि जहाँपर लौकिक भाव है अर्थात् पुरुष और स्त्री दोनों इस लोककी हैं, इस समाजमें उन स्त्रियोंका अपने पतिको छोड़कर परपुरुषकी सेवा करना अत्यन्त घृणित और नरकमें जाने योग्य आचरण है। किन्तु जहाँपर अखिलरसामृतसिन्धु, सर्वैश्वर्यपूर्ण भगवान् श्रीकृष्ण ही नायक हैं, और उनकी शक्तियाँ, उनकी कायव्यूह–गोपियाँ नायिकाएँ हैं, वहाँपर दोनोंका मिलन कदापि घृणित या नारकीय नहीं हो सकता है। गोपियाँ श्रीकृष्णकी स्वरूपशक्ति हैं, यह ब्रह्मसंहितामें कहा गया है।

गोपियोंका श्रीकृष्णसे विवाह नहीं हुआ

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य–इनको द्विजाति कहते हैं तथा विवाहसे पहले इन जातिके लोगों द्वारा उपवीत ग्रहण करना अवश्यम्भावी है। युक्तिके आधार पर भी हम देखते हैं, श्रीकृष्ण द्विजातिके थे तथा श्रीकृष्णका ब्रजमें उपनयन संस्कार तक भी नहीं हुआ था, अतएव वहाँपर उनका विवाह होना तो बहुत दूरकी बात है। दूसरी बात विवाह करनेके बादमें पत्नी पतिके साथ पतिके घरपर चली जाती है और वहीं रहती है। उससे पुत्र आदि सन्तान उत्पन्न होती हैं। किन्तु श्रीमती राधिकाजीका ऐसा नहीं सुना जाता है कि वे सब समय श्रीकृष्णके साथ नन्दभवनमें रहती थीं। बल्कि हम ऐसा देखते हैं, किसी विशेष सेवाके लिए अर्थात् रसोई बनाने आदिके लिए वे नन्दभवनमें जाती थीं। किन्तु वहींसे वे पुनः जावट या बरसानामें लौट जाती थीं। द्वारकापुरीमें वास करते हुए श्रीकृष्णको सोलह हजार एक सौ आठ रानियोंसे प्रत्येकसे दस–दस पुत्र और एक–एक कन्या हुई थी। किन्तु यदि व्रजमें श्रीकृष्णका श्रीमती राधाजी या किसी अन्य गोपीसे विवाह हुआ होता, तो उनसे क्या एक भी कन्या या पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ? हम जब इन सब विषयोंपर विचार करते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है कि व्रजमें गोपियोंका श्रीकृष्णसे विवाह नहीं हुआ था।

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा भक्तिके सोपानोंकी व्याख्या

श्रील रूप गोस्वामीने भक्तिके विभिन्न–स्तरोंका जिस प्रकारसे वर्णन किया है, वैसा वर्णन आजतक किसीने भी नहीं किया, और न ही किसी ग्रन्थमें देखा जाता है। श्रील रूप गोस्वामीने अपने ग्रन्थोंमें सर्वप्रथम श्रद्धासे

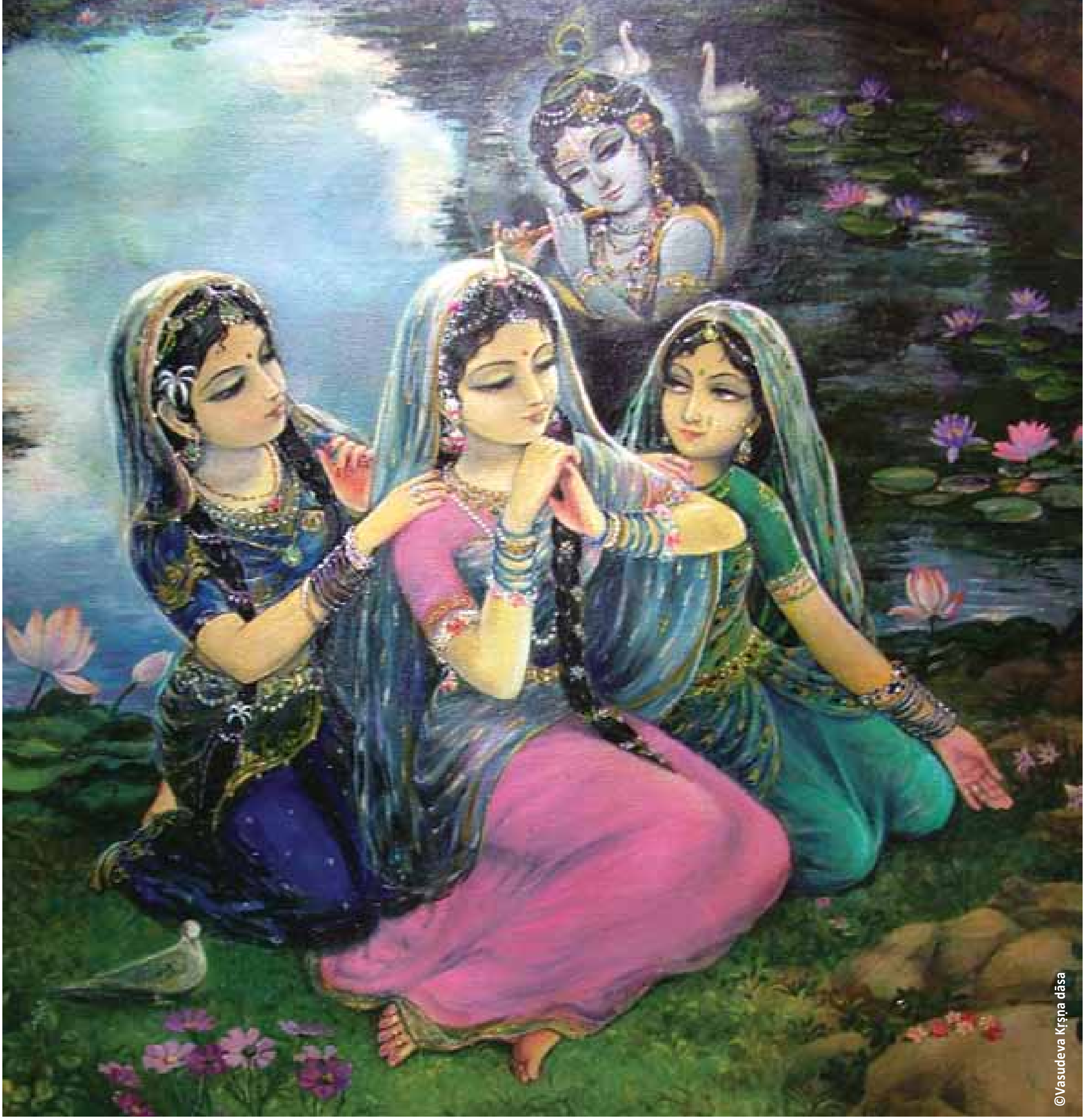

लेकर, साधुसङ्ग, भजनक्रिया, अनर्थ निवृत्ति, निष्ठा, रुचि, आसक्ति, भाव, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव, रूढ़, अधिरूढ़ महाभाव, मोहन महाभाव, मादन महाभाव आदिका अपूर्व विश्लेषण किया है और इन एक–एक स्तरकी एक–एक परिभाषा दी है, जो अन्यत्र कहीं भी किसी भी ग्रन्थमें उपलब्ध नहीं है। यहाँ तक कि उन्होंने हाव, भाव, हेला, किलकिञ्चित्, दिव्योन्माद, चित्रजल्प आदि भावोंकी भी परिभाषा दी है। श्रील रूप गोस्वामीसे पूर्व भक्तिरसकी इतनी सुन्दर और प्रामाणिक विवेचना और कहीं भी उपलब्ध या दृष्टिगोचर नहीं होती।

जैसे—श्रद्धा किसे कहते हैं? **श्रद्धा तु अन्योपायवर्जं भक्ति–उन्मुखी चित्तवृत्ति–विशेषः।** अर्थात् कर्म, ज्ञान, योग, तपस्या आदि अन्यान्य उपायों या मार्गोंको छोड़कर भक्ति–उन्मुखी चित्तवृत्ति ही श्रद्धा है। इसका स्वरूप–लक्षण श्रीकृष्णकी सेवावृत्ति है। श्रीकृष्णकी सेवा–वासनाको ही सेवा–वृत्ति कहते हैं। शरणागति ही उसका बाह्य–लक्षण है।

साधन–भक्ति किसे कहते हैं?

कृति साध्या भवेत् साध्यभावा सा साधनाभिधा।
नित्यसिद्धस्य भावस्य प्राकट्यं हृदि साध्यता॥

(भक्तिरसामृतसिन्धु १/२/२)

साध्य—भावरूप भक्ति इन्द्रियोंके द्वारा अनुष्ठित होने पर उसे साधनभक्ति कहा गया है। भक्ति ही जीवका नित्यसिद्ध भाव है। तात्पर्य यह है कि—चित्कण जीवमें स्वाभाविकरूपमें चित्सूर्य श्रीकृष्णका जो आनन्द कण है, जीव मायाबद्ध होनेसे वह आनन्द—कण वर्तमान समयमें लुप्तप्राय है, वह नित्यसिद्ध भाव अर्थात् आनन्द—कण ही हृदयमें पुनः प्रकाशित करने योग्य है। इसी अवस्थामें नित्यसिद्ध वस्तुकी साध्य अवस्था प्रतिपन्न हुई। वही साध्यभावरूप भक्ति जब बद्धजीवोंके इन्द्रियोंसे साधित होती है, तब उसे ही साधन—भक्ति कहा जाता है।

भाव किसे कहते हैं?

शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्यांशु साम्यभाक्।
रुचिभि त्तिमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते॥

(भ०र०सि० १/३/१)

अर्थात् जो भक्ति शुद्धसत्त्व स्वरूप, प्रेमरूप सूर्यकी किरणके सादृश्ययुक्त (समान) तथा रुचि द्वारा चित्तको आद्रित (द्रवीभूत) करनेवाली है, उसे भाव भक्ति कहते हैं।

'शुद्धसत्त्वविशेषात्मा'—बद्धजीवको मिश्रसत्त्व कहा जाता है। मुक्तजीव शुद्धसत्त्व हैं। श्रीकृष्णका देह, उनके आभूषण आदि व्रजमें सब कुछ विशुद्ध सत्त्व हैं। **'विशेषात्मा'**—(आश्रय जातीय परिकरोंके) दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर—इनमेंसे जिनके भावोंका अनुसरण किया जाता है, उनमेंसे श्रीराधिकाजीका भाव सर्वोत्तम है। श्रीकृष्णके प्रति उनकी जो सेवाकी वासना है, वह विशेषात्मा है। **प्रेमसूर्यांशु साम्यभाक्**—प्रेमरूपी सूर्यकी किरणस्वरूप यह भाव है। **रुचिभिश्चित्तमासृणौ**—जो रुचिके द्वारा चित्तको अत्यन्त कोमल कर देता है, उसको भाव या रति कहते हैं।

प्रेमकी परिभाषा—

सर्वथा ध्वंसरहितं सत्यपि ध्वंसकारणे।
यद्भावबन्धनं यूनो स प्रेमा परिकीर्तितः॥

(उज्ज्वलनीलमणि १४/६३)

प्रेमके ध्वंस होनेका कारण विद्यमान होनेपर भी जो प्रेम सर्वथा ध्वंस नहीं होता, श्रीश्रीराधाकृष्ण युगलके ऐसे परस्पर प्रेम—बन्धनका नाम ही प्रेम है।

दूसरा—

अनन्यममता विष्णौ ममतां प्रेमसङ्गता।
भक्तिरित्युच्यते भीष्मप्रह्लादोद्धवनारदैः॥

(भ०र०सि० १/४/२)

अन्य सभीके प्रति ममता रहित होकर एकमात्र श्रीविष्णुके प्रति प्रेमयुक्त ममताको भीष्म, प्रह्लाद, उद्धव और नारद आदि महाजन भक्ति या प्रेम कहते हैं।

सम्यक् मसृणित स्वान्तो ममता अतिशयाङ्किता।
भाव स एव सान्द्रात्मा बुधै प्रेमा निगद्यते॥

(भ० र० सि० १/४/१)

जो भाव हृदयको भलीभाँति द्रवित कर उसमें अत्यधिक ममता ला देता है एवं जो अत्यन्त घन आनन्दस्वरूप है, उसे भाव कहते है। पण्डितजन, विद्वान् व्यक्ति, प्रेमरसज्ञ व्यक्ति इसीको प्रेम कहते हैं।

इस प्रकारसे श्रीरूप गोस्वामीके अनन्त वैशिष्ट्योंके समुद्रमेंसे उस महासागरके तटपर खड़े होकर हमने कुछेक कणोंको स्पर्श करनेका प्रयास किया है।

वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः॥

(श्रीश्रीभागवत—पत्रिका वर्ष—५, संख्या—८, २००८ ई०)

श्रील रूप गोस्वामिपादकी तिरोभाव-तिथिके उपलक्ष्यमें महा-महोत्सवका आयोजन करनेके कुछेक मुख्य उद्देश्य

नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके अन्तिम, मुख्य, सर्वोत्तम तथा सार्वकालिक उपदेश 'श्रीचैतन्यदेवके मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रील रूप गोस्वामीके चरणकमलोंकी धूल होना ही हमारे जीवनकी एकमात्र आकांक्षाकी वस्तु है' तथा 'सभी मिल-जुलकर परम उत्साहपूर्वक श्रीरूप-रघुनाथकी वाणीका जगतमें प्रचार करें' आदिको ही शिरोधार्य करके अपने जीवनका सर्वस्व माननेवाले नित्यलीला प्रविष्ट श्रीश्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके अन्तरङ्ग परिकर ॐ विष्णुपाद श्रीश्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज द्वारा लगभग पिछले बीस वर्षोंसे श्रील रूप गोस्वामिपादकी तिरोभाव-तिथिके उपलक्ष्यमें श्रीधाम वृन्दावन स्थित श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठमें पाँच दिवस व्यापी महा-महोत्सवका आयोजन किया जाता है। इस महोत्सवके कुछेक मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं—

(१) जगतके लोगोंको श्रील रूप गोस्वामीके वैशिष्ट्योंसे अवगत कराना।

(२) श्रीचैतन्य मनोऽभीष्ट क्या है? इसे निर्धारित करना।

(३) उन्नत-उज्ज्वल-रस अर्थात् पारकीय-रसकी श्रेष्ठताको श्रील रूप गोस्वामी द्वारा प्रस्तुत की गई सुदृढ़ शास्त्रीय युक्तियों द्वारा स्थापन करना।

(४) गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायके महानिधि स्वरूप अप्राकृत-रसका विभिन्न दृष्टिकोणोंसे आस्वादन कराना।

(५) श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायमें श्रील रूप गोस्वामीका अवदान।

(६) गौड़ीय भक्तोंके प्रति श्रील रूप गोस्वामीकी कृपा।

(७) श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित ग्रन्थोंका दिग्दर्शन प्रस्तुत करना।

(श्रीश्रीभागवत-पत्रिका वर्ष-४ संख्या-७)

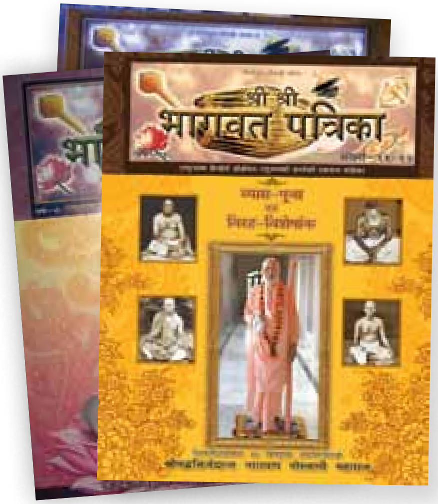

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके ग्राहकोंसे वार्षिक सदस्यता–शुल्क भुगतानके लिए निवेदन

आदरणीय श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके ग्राहको!

आपसे पुन: यह निवेदन किया जा रहा है कि आपमेंसे जिन्होंने अभी तक इस वर्षका देय वार्षिक शुल्क भुगतान नहीं किया है, वह शीघ्र–अतिशीघ्र इस वार्षिक शुल्कका भुगतानकर पत्रिकाके माध्यमसे श्रीवैकुण्ठ–वार्त्तावहको नियमित रूपसे प्राप्त करनेके सौभाग्यका वरण करें।

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके इस अष्टम वर्षमें समस्त अंक विरह–विशेषांक हेतु रंगीन और सचित्र प्रकाशित होंगे, अत: केवल इस अष्टम वर्षके लिए ही वार्षिक शुल्क भारतीय सदस्योंके लिए ३०० रुपये तथा विदेशी सदस्योंके लिए ३० अमेरिकन डालर किया गया है। हम अपने सभी सहृदय पाठक–भक्तोंसे इस विषयमें सहयोगकी आशा करते हैं।

इस वर्षसे सदस्यवृन्द निम्न प्रकारसे सहजरूपमें शुल्क भुगतान कर सकते हैं:

भारतीय सदस्योंके लिए

नये सदस्योंके लिए

कृपया www.bhagavatpatrika.com वैबसाइटपर जायें और वहाँ दिये गये Instructions के अनुसार सदस्य बनें।

सदस्यता नवीकरणके लिए

(१) Bank to bank NEFT transfer

Account name: SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA
Account no. : 037201000010611
IFSC code: IOBA0000372
Bank: Indian Overseas bank

८७९१२७३३०६ phone number पर अपनी ग्राहक संख्या या अपना नाम और सदस्य शुल्कके साथ एक SMS भेजें।

अथवा

mathuramath@gmail.com में अपनी ग्राहक संख्या या अपना नाम और सदस्य शुल्कके साथ एक email भेजें।

(२) Demand draft or Cheque (account payee)

payable to:
"SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA"
श्रीश्रीभागवत–पत्रिका कार्यालय,
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरा, उ.प्र.
२८१००१ के पतापर
Demand draft or Cheque भेजें।

(३) Money order

श्रीश्रीभागवत–पत्रिका कार्यालय,
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरा, उ.प्र.
२८१००१ के नामपर भेजें।

विदेशी सदस्योंके लिए

नये सदस्य तथा सदस्यता नवीकरणके लिए

कृपया www.bhagavatpatrika.com वैबसाइटपर जायें और वहाँ दिये गये instructions के अनुसार नये सदस्य बनें या अपनी सदस्यताका नवीकरण करें।

विदेशी सदस्योंके लिए इस वर्षसे "Paypal" द्वारा भुगतान करनेकी सुविधा उपलब्ध करायी गयी है। अधिक जानकारीके लिए www.bhagavatpatrika.com वैबसाइट देखें।

श्रीश्रीभागवत पत्रिकाकी नयी Website:
www.bhagavatpatrika.com

श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गकी कृपासे अब श्रीश्रीभागवत पत्रिका online पर भी www.bhagavatpatrika.com नामक website पर उपलब्ध है। इस नयी website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके कुछेक पुराने अंक एवं नयी संख्याओंके अंश download किये जा सकते हैं। साथ ही इस वर्षकी व्रत–तालिका भी download की जा सकती है। मुख्यत: अब इस website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके नये सदस्य बनने या सदस्यता नवीकरण करानेके लिए सुविधा भारतीय तथा अन्तराष्ट्रीय भक्तोंके लिए उपलब्ध करायी गयी है।

विशेष ज्ञातव्य

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके पाठकों और सदस्योंको सूचित किया जाता है कि श्रीपत्रिका इस सम्पूर्ण आठवें वर्ष श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके विरह–विशेषांकके रूपमें प्रकाशित होगी। अत: इस वर्ष पत्रिकाकी दो–दो संख्याएँ एक साथ दो–दो महीनोंमें एक बार प्रकाशित होंगी।

श्रील गुरुदेवके प्रति अपनी कृतज्ञताका स्मरण करते हुए श्रील गुरुदेवके चरणाश्रित (१) श्रीमान् मधुमङ्गल दास ब्रह्मचारी (पुरी), (२) श्रीमान् वंशीवदन दास ब्रह्मचारी (पुरी), (३) श्रीमान् बलराम दास ब्रह्मचारी (दिल्ली), (४) श्रीमान् कुलदीप भौमिक (कोलकत्ता), (५) श्रीमान् दुलाल साहा गोपाल साहा (कोलकत्ता), (६) श्रीमान् प्रियकृष्ण दास (फरीदाबाद) ने इस विरह–विशेषाङ्के प्रकाशन हेतु आंशिक आर्थिक योगदानके द्वारा विशेष सेवा–सौभाग्यको वरण किया है। इन सबकी विशेष सेवाके लिये श्रील गुरुदेव अपने नित्यधामसे इन पर विशेष कृपा वर्षित करें–यही श्रील गुरुदेवके अभय चरणकमलोंमें विनम्र प्रार्थना है।

‘श्रीश्रीभागवत पत्रिका’ का सम्पादक एवं कार्यकारी मण्डल

श्रीब्रजमण्डल परिक्रमा—२०११

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा

०९ अक्टूबर रविवार

(त्रयोदशी) श्रीदुर्वासा ऋषि गौड़ीय आश्रमका दर्शन। सायंकाल वृन्दावन प्रस्थान। ०९ अक्टूबर सायं से २४ अक्टूबर प्रातः तक गोपीनाथ भवनमें प्रसाद सेवा।

१० अक्टूबर सोमवार

(चतुर्दशी) हरिकथा एवं विश्राम।

११ अक्टूबर मंगलवार

श्रीशरद पूर्णिमा, कार्तिक व्रत आरम्भ, केशीघाटमें परिक्रमाका संकल्प, श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीका विरह—महोत्सव।

१२ अक्टूबर बुधवार

(पूर्णिमा) कालीय दह, श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीका भजन कुटीर और समाधि, श्रीसनातन गोस्वामीका भजन कुटीर, श्रीमदनमोहन, दानगली।

१३ अक्टूबर गुरुवार

(प्रतिपदा) सेवाकुञ्ज, श्रीराधादामोदर, इमलीतला, शृंगार वट आदि।

१४ अक्टूबर शुक्रवार

(द्वितीया) बेलवनका दर्शन।

१५ अक्टूबर शनिवार

(तृतीया) निधुवन, श्रीराधारमण, श्रीगोकुलानन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीश्यामसुन्दर।

१६ अक्टूबर रविवार

(चतुर्थी) हरिकथा एवं विश्राम।

१७ अक्टूबर सोमवार बस द्वारा

(पञ्चमी) (वृन्दावनसे) मधुवन, तालवन, कुमुदवन, मानसरोवर, माँटवन, भद्रवन, भाण्डीर वनमें प्रसाद—सेवा।

१८ अक्टूबर मंगलवार

(षष्ठी) धीर समीर, वंशीवट, गोपेश्वर, गोविन्ददेव।

१९ अक्टूबर बुधवार बस द्वारा

(सप्तमी) दाऊजी, श्रीदाऊजी गौड़ीय मठमें प्रसाद—सेवा, ब्रह्माण्ड घाट, महावन—गोकुल, रावल, लौहवन।

२० अक्टूबर गुरुवार

(अष्टमी) भातरौल, अक्रूर घाट, यज्ञपत्नी स्थानमें प्रसाद—सेवा।

२१ अक्टूबर शुक्रवार

(नवमी) श्रील भक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराजजीका आविर्भाव महोत्सव।

२२ अक्टूबर शनिवार बस द्वारा

(दशमी) खेलनवन, रामघाट, विहारवन, चीरघाटमें प्रसाद—सेवा, वत्सवन, गरुड़गोविन्द।

२३ अक्टूबर रविवार

(एकादशी) वृन्दावन परिक्रमा।

२४ अक्टूबर सोमवार बस द्वारा

(द्वादशी) बहुलावन, पैंठा, चन्द्रसरोवर होकर श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें वास।

२५ अक्टूबर मंगलवार

(त्रयोदशी) गोवर्धन बड़ी परिक्रमा—दानघाटी, आन्यौर, गोविन्दकुण्ड, पूछरी, सुरभिकुण्डमें प्रसादसेवा, जतीपुरा। सायंकाल दीपावली।

२६ अक्टूबर बुधवार

(अमावस्या) राधाकुण्ड परिक्रमा, कुसुम सरोवर आदि होकर गिरिधारी गौड़ीय मठमें प्रसाद—सेवा। अन्नकूट महोत्सव।

२७ अक्टूबर गुरुवार

(प्रतिपदा) अन्नकूट महोत्सव। सायंकाल बड़ी दीपावली।

२८ अक्टूबर शुक्रवार

(द्वितीया) यम द्वितीया, भैयादूज। श्रीहरिदेव, ब्रह्मकुण्ड, चकलेश्वर महादेव, श्रीसनातन गोस्वामीकी भजन कुटीर, मुखारविन्द आदि।

२९ अक्टूबर शनिवार

(तृतीया) श्रील भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज एवं श्रील भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम गोस्वामी महाराजका तिरोभाव महोत्सव।

३० अक्टूबर रविवार

(चतुर्थी) श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजका तिरोभाव महोत्सव।

३१ अक्टूबर सोमवार

(पञ्चमी) किल्लोल कुण्ड, ग्वाल पोखरा, श्याम तलैया, रत्नवेदी,चरणचिह्न, नारदकुण्ड। श्रीलभक्तिश्रीरूप सिद्धान्ती गोस्वामी महाराजका आविर्भाव महोत्सव।

१ नवम्बर मंगलवार बस द्वारा

(षष्ठी) गांठौली, गुलालकुण्ड, डीग, भोजनथाली, पिछल पहाड़ी, व्योमासुरकी गुफा, गोविन्दजी, वृन्दादेवी, कामेश्वर महादेव, विमलकुण्डमें प्रसाद—सेवा, चरण पहाड़ी।

२ नवम्बर बुधवार

(सप्तमी) श्याम ढाक, दोहनी कुण्ड।

३ नवम्बर गुरुवार बस द्वारा

(अष्टमी) नन्दगाँव, मार्गमें प्रेमसरोवर, संकेत, नन्दखिड़क, उद्धवक्यारी, ललिताकुण्ड, नन्दभवन, टेर—कदम्ब, आशीषेश्वर महादेवमें प्रसाद—सेवा, पावन सरोवर, छोटी चरण पहाड़ी।

४ नवम्बर शुक्रवार

(नवमी) हरिकथा एवं विश्राम।

५ नवम्बर शनिवार बस द्वारा

(दशमी) सांकरी खोर, चिकसौली, गह्वरवन परिक्रमा, विलासगढ़, मानगढ़, दानगढ़, मोरकुटी, श्रीजी मन्दिर, बरसाना, पीलीपोखर, ऊँचागाँवमें प्रसाद—सेवा, सखीगिरि पर्वत, सूर्यकुण्ड।

६ नवम्बर रविवार

(एकादशी) श्रील गौरकिशोर दास बाबाजी महाराजका तिरोभाव महोत्सव। भीष्मपंचक। दीक्षा समारोह।

७ नवम्बर सोमवार

(द्वादशी) आनन्द धाम गौड़ीय आश्रममें वार्षिक उत्सव।

८ नवम्बर मंगलवार बस द्वारा

(त्रयोदशी) खदीरवन, कोकिलावन, यावट, बैठान, चरण पहाड़ीमें प्रसाद—सेवा।

९ नवम्बर बुधवार

(चतुर्दशी) श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजका तिरोभाव महोत्सव।

१० नवम्बर गुरुवार

(पूर्णिमा) वैष्णव होम, ऊर्जाव्रत समापन।